UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180168

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 923.254 B58 D   Accession No. G. H. 2720

Author बिड़ला, घनश्यामदास

Title डायरीके कुछ पन्ने   1958

This book should be returned on or before the date last marked below.

डायरीके कुछ पन्ने

—दूसरी गोलमेज-परिषद्‌में गांधीजी के साथ—

लेखक

घनश्यामदास बिड़ला

●

पुस्तक भेंट के निमित्त है

१९५८

सस्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तंड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पांचवीं बार : १९५८

मूल्य
एक रुपया २५ न०

मुद्रक
नशनल प्रिंटिंग वर्क्स,
दिल्ली

प्रकाशकीय

भारतीय वाणिज्य-व्यापार की प्रमुख प्रतिनिधि-संस्था के एक प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत पुस्तक के लेखक द्वितीय गोलमेज परिषद् में भाग लेने लंदन गये थे। उस यात्रा तथा परिषद् का बड़ा ही सजीव वर्णन उन्होंने इस पुस्तक में किया है। वस्तुतः वह एक ऐतिहासिक यात्रा थी। अतः उससे संबंधित विवरण न केवल रोचक सामग्री प्रदान करते हैं, अपितु भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय जोड़ते हैं।

सामग्री की दृष्टि से उपादेय तथा शैली की दृष्टि से मनोरंजक होने के कारण इस पुस्तक को असाधारण लोकप्रियता प्राप्त हुई है। उसके पांच संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके तथ्य पुराने होते हुए भी आज भी इसे पढ़ने में ऐसा नहीं लगता कि कोई पुरानी चीज पढ़ रहे हैं।

हमें विश्वास है कि इस नवीन संस्करण का भी वैसा ही आदर होगा जैसा कि पहले के संस्करणों का हुआ है।

—मंत्री

भूमिका

फेडरेशन, जिसका पूरा नाम है Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry, भारतीय वाणिज्य-व्यापारकी प्रमुख प्रतिनिधि-संस्था है। भारतीयका अर्थ यहां यह समझना चाहिए—जिसमें पैसा भारतवासियोंका लगता हो और जिसका संचालन भी भारतवासियोंके ही हाथमें हो। फेडरेशन एक संघ या महासंघ है, जिससे देशके विभिन्न भागोंकी विभिन्न भारतीय व्यापारी संस्थाएं संबद्ध हैं। डायरी-लेखक श्री घनश्यामदास बिड़ला इसी फेडरेशनके प्रतिनिधि-स्वरूप लंदनकी दूसरी गोलमेज-कांफ्रेंसमें शरीक हुए थे।

पहली कांफ्रेंसमें, फेडरेशन अपने १९३०के इस निश्चयके अनुसार कोई भाग न ले सका कि जिस कांफ्रेंसमें महात्मा गांधी नहीं जाते या जिसे उनका आशीर्वाद प्राप्त नहीं होता, उससे फेडरेशन बिल्कुल अलग रहेगा। जब गांधी-इर्विन समझौतेसे देशका राजनैतिक वातावरण बदला और महात्माजीके लंदन जानेकी पूरी आशा दीखने लगी तब फेडरेशन दूसरी कांफ्रेंसमें शरीक होनेको तैयार हुआ।

कांफ्रेंसमें उसको तीन प्रतिनिधि भेजनेका हक हासिल हुआ। वह और भी सीट—डायरी-लेखकके शब्दमें 'कुर्सियां'—चाहता था, मगर लार्ड इर्विनके समझाने-बुझानेपर तीनसे ही संतुष्ट हो गया। अपने इन प्रतिनिधियों के नाम उसने बड़े लाटके पास बाकायदा भेज दिये और १४ अप्रैल, १९३१ को उनकी ओरसे इन नामोंकी मंजूरी भी आ गई।

मगर जब ४ अगस्तको कांफ्रेंसके मेंबरोंके नाम प्रकाशित हुए तब सबको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि फेडरेशनको तीनकी जगह एक ही कुर्सी दी गई थी और सरकारने उसके लिए, फेडरेशनके भेजे हुए नामोंमेंसे, सिर्फ सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासका नाम चुन रखा था।

साफ जाहिर था कि शिमला-शिखरपर इस बीचमें, बड़े लाटतकसे

वादा-खिलाफी करानेवाली कोई खास हवा चल गई थी। लंदनमें तो यह सुननेमें आया था कि भारत-मंत्रीके दफ्तरके दबावमें पड़कर ही भारत-सरकारने यह उलट-फेर किया था। जो हो, फेडरेशनने, ऐसी स्थितिमें कान्फ्रेंसमें कोई भी भाग लेनेसे साफ इंकार कर दिया। उसने अपने प्रस्तावमें कहा कि हमारी ओरसे जायंगे तो तीनों प्रतिनिधि, नहीं तो एक भी नहीं। और यह भी ऐलान कर दिया कि फेडरेशनके प्रतिनिधियोंकी अनुपस्थितिमें, कान्फ्रेंसमें कोई समझौता हुआ तो वह भारतीय व्यापारी-समाजको मान्य न होगा।

फेडरेशनकी जीत रही। अधिकारियोंको अंतमें मजबूर होकर एकको तीन करना पड़ा और बाकी दो प्रतिनिधियोंको भी कुर्सियां देनी पड़ीं। १६ अगस्तको फेडरेशनके तत्कालीन अध्यक्ष सेठ जमाल मुहम्मद साहिबके पास बड़े लाटके प्राइवेट सेक्रेटरीका पत्र पहुंचा कि आप और श्रीघनश्यामदास बिड़ला दोनों कान्फ्रेंसमें भाग लेनेके लिए निमंत्रित किये जाते हैं। इस प्रकार डायरी-लेखकको लंदनमें कुछ दिन गोलमेजके इर्द-गिर्द भी बिताने पड़े। यह उनकी दूसरी यूरोप-यात्रा थी, जिसका खास उद्देश्य इंग्लैंड होते हुए अमेरिका जाना था। यह यात्रा उन्हें अब कुछ महीनोंके लिए स्थगित कर देनी पड़ी।

कान्फ्रेंसमें सरकारने जो चाहा था, वही हुआ। वहां जो दुःखदायी दृश्य देखनेमें आये, उनका वर्णन करते हुए लेखकने अपना यह कटु अनुभव प्रकट किया है कि बात बिगाड़नेवाले "सब-के-सब सरकार द्वारा मनोनीत" थे। "यदि प्रजा द्वारा मनोनीत किये गये होते तो यह नौबत न आती।" विधान-निर्माणके लिए कांस्टीट्युएण्ट असेंबली (Constituent Assembly) जैसी संस्थापर अपनी राष्ट्रीय मांगमें, इतना जोर क्यों दिया जाता है, यह लेखकका अनुभव सुननेपर सहज ही स्पष्ट हो जाता है।

डायरी-लेखकका जो भाषण कान्फ्रेंसके खुले अधिवेशनमें हुआ वह स्पष्टवादितासे भरपूर था। उसमें उन्होंने इस बातपर पूरा प्रकाश डाला कि प्रस्तावित आर्थिक प्रतिबंध भारतवासियोंके लिए असह्य क्यों थे। आमदनीका ८० फी सदीसे अधिक भाग फौजी खर्च, कर्जके सूद आदिके लिए इस प्रकार

अलग कर दिया गया था कि वह भारतके भावी अर्थ-सचिवकी पहुंचसे बिल्कुल बाहर था—उसमें मीन-मेख करनेका उन्हें कोई भी अधिकार न था। कहना चाहिए कि यह सारा हिस्सा खर्चकी इन मदोंके लिए 'गिरवी' या 'बंधक' रख दिया गया था। उस भाषणमें इस बातपर काफी जोर था कि इंग्लैंड और हिंदुस्तानके बीच सबसे पहले इस खर्चकी रकमके बारेमें समझौता होकर हिंदुस्तानका बोझ हलका होना चाहिए—गिरवी या बंधकसे इस मुल्ककी आमदनीके मुनासिब हिस्सेको छुटकारा मिलना चाहिए। भाषणके अंतिम शब्द ये थे—"कोई भी सरकार किसी देशकी सम्मतिके बिना उसपर शासन नहीं कर सकती। अगर अमन-चैन कायम रखना है तो यह जरूरी है कि या तो आप हमारी मर्जीसे हमपर हुकूमत करें, या हमको अपने ऊपर आप हुकमत करने दें। इस हालतमें हम आपके दोस्त और साझीदार हो सकते हैं। अगर आपने इस मौकेपर हमसे कोई दोस्ताना समझौता न किया तो यह आपकी भयंकरसे भयंकर भूल होगी। मेरे एक अंगरेज दोस्त उस रोज मुझसे कह रहे थे कि '१९३०की गोलमेज कान्फ्रेंसमें न आकर तुम लोगोंने बड़ी भूल की। उस समय मजूर-सरकारकी हमदर्दीसे तुम लोग काफी फायदा उठा सकते थे।' मालूम नहीं, इसमें कहांतक सचाई है? मगर मौजूदा सरकारने यह मौका हाथसे जाने दिया, और हिंदुस्तानके साथ कोई समझौता न किया तो मेरी समझसे यह उसकी बहुत बड़ी भूल होगी। मैं अपने मुल्कके नौजवानोंको अच्छी तरह जानता हूं। बहुत संभव है कि कुछ वर्ष बाद इंग्लैण्डको महात्मा गांधी या भारतीय नरेशों या मुझ-जैसे पूंजीपतियोंसे समझौता न करके बिल्कुल नये आदमियों से, नई अवस्थाओंसे, नये विचारोंसे, नई आकांक्षाओंसे निपटना पड़े। इंग्लैण्ड को सावधान हो जाना चाहिए।"

लंदनसे लौटनेपर, ब्रिटिश स्वत्वों के संरक्षणके लिए, 'समझौता' चाहने वाले मि० बेंथलने, अंगरेज व्यापारियोंकी एक सभामें, कान्फ्रेंसकी कहानी सुनाते हुए, कुछ ऐसी बातें कहीं, जिनसे फेडरेशनके प्रतिनिधियोंको बहुत दुःख और आश्चर्य हुआ। मि० बेंथलके इस भाषणकी जो रिपोर्ट अखबारोंमें

छपी, उसका उनकी ओरसे कोई खंडन नहीं हुआ। इसमें महात्मा गांधीपर कुछ ऐसे दोषारोपण किये गए थे, जिनमें सत्यका लेश भी न था। साथ ही कुछ ऐसी बातें थीं, जिन्हें पढ़कर किसीको भी यह संदेह हो सकता था कि फेडरेशनके प्रतिनिधियों या महात्मा गांधीसे उन्होंने लंदनमें समझौतेकी जो बातचीत की, वह कूटनीतिमें भले ही शुमार हो, मगर वह चीज न थी जिसका उनकी ओरसे बार-बार विश्वास दिलाया गया था। हम पाठकोंका ध्यान डायरीके मि० बेंथल-संबंधी भागकी ओर आकर्षित करते हैं।

फेडरेशनके प्रतिनिधियोंने अपनी कमेटीको जो रिपोर्ट दी उसमें महात्मा गांधीके संबंधमें ये विचार प्रकट किये थे—

"कान्फ्रेंसके असफल होनेका दोष महात्मा गांधीके माथे मढ़नेकी चेष्टा की गई है। इससे बढ़कर कोई झूठा अपवाद या कलंक नहीं लगाया जा सकता। हमलोगोंको लंदनमें उनके साथ काम करनेका और उनके विचारोंसे अवगत होनेका काफी अवसर मिला। हमलोग अपनी जानकारीसे कह सकते हैं कि मुनासिब शर्तों पर सुलह या समझौता करनेके लिए महात्माजी बराबर तैयार थे। वह अपनी मांगमें नरमसे नरम रहे और समझौतेके लिए उन्होंने अपनी ओरसे कुछ भी उठा न रखा। अपने एक भाषणमें उन्होंने अपनी शांति-प्रियताका परिचय इन मर्मस्पर्शी शब्दोंमें दिया कि 'दिल्लीमें जो समझौता थोड़े समयके लिए हुआ था, उसको मैं स्थायी शांतिके रूपमें परिणत देखना चाहता हूं, मगर ईश्वरके लिए, ६२ वर्षके इस जरा-जीर्ण व्यक्तिको एक मौका तो दो। उसको और कांग्रेसको, जिसका वह प्रतिनिधि है, अपने दिलमें कोई छोटा-सा कोना तो बख्शो।' मगर कान्फ्रेंसमें यह अरण्यरोदन ही रहा, और मि० बेंथलके शब्दोंमें महात्माजीको 'खाली हाथ' लौटना पड़ा।"

डायरी कान्फ्रेंसके ऐसे अधिवेशनसे संबंध रखती है जो महात्मा गांधीकी उपस्थितिके कारण विश्व-विख्यात हुआ—जिसकी बातोंमें भारतवासी-मात्रने खास दिलचस्पी ली। इसके लेखक इसमें वर्णित घटनाओंके अत्यंत निकट थे, बल्कि जो कुछ हो रहा था, उसकी भीतरी जानकारी जैसी उनको थी शायद ही किसी दूसरे को रही हो। जिस इतिहासको उन्होंने अपनी इस डायरीका

मुख्य विषय बनाया, उसके निर्माणमें उनका अपना ही हाथ था। इनसब कारणोंने उनके साक्ष्यमें विशेष प्रामाणिकता ला दी—बराबरके लिए उनके इस बयानको 'काम की चीज' बना दिया।

ऐसी डायरीका प्रकाशन आज इस आशा और विश्वाससे किया जा रहा है कि इसके पन्ने न केवल इतिहासका शोध या अध्ययन करनेवालोंके लिए ही उपयोगी होंगे, बल्कि उन लोगोंके लिए भी, जिनका विषय वर्तमान या आधुनिक राजनीति है।

—पारसनाथ सिंह

गांधीजी जहाज़ पर चढ़ रहे हैं, लेखक तथा श्री पट्टणी के साथ

भूमध्यसागर में

डायरीके कुछ पन्ने

--दूसरी गोलमेज-परिषद्में गांधीजीके साथ--

एक

२९ अगस्त, '३१

'राजपूताना' जहाज

बंबईमें आज सबेरेसे ही चहल-पहल थी। महात्माजी कुछ कालके लिए भारतवर्षमें न रहेंगे, सबके चेहरेसे यही भाव झलक रहा था। मुझे तो सद्भाग्यसे ही यह संयोग मिल गया है कि जिस बोटसे गांधीजी और मालवीयजी जाते हैं, उसीसे मैं भी जा रहा हूं। जब जहाजमें जगह ली थी, तब तो यह निश्चित था कि महात्माजी आर० टी० सी० में न जायंगे, किंतु विधिने तो पहलेसे ही निश्चित कर रखा था कि गांधीजीको विलायत जाना है और 'विधिका रचा को मेटनहारा'?

बंगलेसे चलकर बंदरपर पहुंचा तो फोटो लेनेवाले पागल दर्जनोंकी तादादमें मुझपर टूट पड़े। न मालूम कितने प्लेट उन्होंने बर्बाद किये। पच्चीससे कम तो न थे। स्वदेशी धनको विदेश इस तरह भेजा जाता है! आखिर मेरे फोटोकी कीमत?

जहाजपर सवार होनेके थोड़ी ही देर बाद महात्मा गांधीकी जयध्वनिसे आकाश गूंज उठा। बस, सब लोग समझ गये कि गांधीजी आ रहे हैं। सारे जहाजमें चहल-पहल मच गई। क्या हिंदुस्तानी, क्या अंगरेज, स्त्री-पुरुष दौड़-दौड़कर मौकेके स्थानपर कब्जा जमाने लगे। बंदरसे आधी मीलकी दूरी तकके सभी मकानोंकी छतें खचाखच भरी थीं। चारों ओरसे जय-जय!

जहाजके ऊपर पहुंचनेमें महात्माजीको काफी कष्ट हुआ। मगर अंगरेज मल्लाहोंने किसी तरह हाथोंकी बाड़ बनाकर ऊपरतक पहुंचाया और सुरक्षित स्थानमें खड़ा कर दिया। वहींसे किनारेके लोगोंको महात्माजी दर्शन देते रहे। क्या विचित्र दृश्य था! आर० टी० सी० में जो लोग पहले गये थे वे जनताके प्रतिनिधि हैं, या एक मन वजनका दुबले-पतले शरीरवाला गांधी प्रतिनिधि है, इस बातकी गवाही लोगोंका भाव दे रहा था। इतनेमें ही थोड़ी-थोड़ी वर्षा भी होने लगी। मानों इंद्र भी विदाईके आंसू बहा रहा था। किंतु लोग अपनी जगहसे न हटे। जहाजका घंटा हुआ। फिर दूसरा घंटा हुआ। तीसरा घंटा हो जानेपर लोगोंको स्मरण हुआ कि आखिर हमें जहाजसे उतरना है। वे किनारे उतरे, मगर आंखें सबकी गांधीजीकी ओर लगी थीं। वल्लभभाईके चेहरेपर विषाद था। जवाहरलालजीके चेहरेपर मुस्कराहट। पंडितजी अभी पहुंचे भी न थे। सब लोग पूछते थे—"मालवीयजी अभी नहीं आये?" आखिर ऐन मौकेपर पहुंचे।

जहाजने लंगर उठाया और धीरे-धीरे सरका, तब कहीं पता लगा कि हम लोग जानेवाले हैं। रामेश्वर, ब्रजमोहन रूमाल हिला-हिलाकर संकेत कर रहे थे। पर मैं तो विचित्र दशामें गोते खा रहा था। एक छोटे-से दुबले-पतले आदमीने लोगोंको कैसा मोहित कर लिया है, इसीपर विचार कर रहा था। किंतु जहाज चलने लगा तो याद पड़ा कि जा रहा हूं। ज्यों-ज्यों जहाज और किनारेके बीचका अंतराय बढ़ता गया, त्यों-त्यों मन तेजीके साथ किनारेकी ओर दौड़ लगाने लगा। शायद किनारेके लोगोंकी भी यही हालत थी। आखिर आंखोंने काम देना बंद कर दिया और लोगोंको पहचानना भी मुश्किल हो गया। तब कानोंसे जयनाद सुनते रहे। अंतमें तो समुद्रका खूं खूं रह गया। हिंदुस्तानका तो अब नामोनिशान भी नहीं। चारों तरफ पानी-ही-पानी है और उसके बीच हमारी छोटी-सी दुनिया—"राजपूताना" जहाज!

हिंदुस्तानके हृदय-सम्राट्की ऐतिहासिक यात्राका यह दृश्य सचमुच हृदय पिघलानेवाला है।

दो

३० अगस्त, '३१
'राजपूताना' जहाज

जहाजपर मर्य्यादा प्रायः भंग हो गई है। १९२७में मैं आया था तो कपड़ोंका स्वांग रचना पड़ता था। रातके कपड़े, दिनके कपड़े, पूरा झमेला था। घंटा भर तो प्रायः कपड़े बदलनेमें ही लगता था। धोती-कुर्ता पहनना तो मानो गुनाह था। अबकी बेर यह हाल है कि धोती-कुर्तेवाले जहाजपर बेखटके फिरते हैं। न तो कोई पूछनेवाला है, न किसीको संकोच है। मुझे अब मालूम होने लगा है कि अपने धोती-कुर्ते छोड़ आया, यह गलती हुई। जहाजके मुसाफिर, कप्तान वगैरह भी धोती-कुर्तों को बर्दाश्त कर लेते हैं। यों तो उन्हें बुरा ही लगता होगा, पर शिमलेका आदेश है कि गांधीके आरामका ध्यान रखो, इसलिए सबकुछ बर्दाश्त कर लेते हैं।

पंडितजीके लिए चूल्हा अलग बन गया है। गंगाजल भी साथ है। मिट्टीका कनस्तर, स्वदेशी साबुन, दातौनोंका बड़ा-सा बंडल। उधर गांधीजीका चर्खा, पींजन, बड़ी-बड़ी विचित्र चीजें साथ चल रही हैं। जहाजवाले भी देखते हैं कि यह शिवजीकी बरात अच्छी आई। आते-जाते तिरछी नजर डाल जाते हैं, पर ऊपर से पूरा अदब दिखाते हैं।

जहाज चलते ही गांधीजीने अपना असबाब संभालना शुरू किया। इस ट्रंकमें क्या है? उसमें क्या है? यह पूछताछ शुरू हुई। बेचारी मीराबेन तो झट समझ गई कि तूफान आनेवाला है। महादेव और देवदास तो बंबई गांधीजीके साथ ही पहुंचे थे। इसलिए सारे प्रबंधका भार मीराबेनके ऊपर ही था। और जहां

गांधीजीने हिसाब पूछना शुरू किया, मीरा समझ गई कि खैर नहीं है। पहलेपहल तो गांधीजीने पूछा, इस ट्रंकमें क्या है? मीराने कहा——बापू, इसमें आपके कपड़े हैं। गांधीजीने कहा——मेरे कपड़े हैं? इतने बड़े ट्रंकमें? मीराने कहा——लेकिन यह भरा हुआ नहीं है। गांधीजी——हां, तो तुम इसे भर देना चाहती थीं, यह नहीं सोचा कि हिंदुस्तानमें तो मेरे कपड़े बिना ट्रंकके ही चलते थे।

मीराने ट्रंक खोलकर सामग्रियां सामने रखीं तो गांधीजीका चेहरा लाल हो गया। सामान ज्यादा न था, किंतु एक भी पैसा अधिक खर्च हो, यह गांधीजीको असह्य था। पेटियां सारी मंगनीमें लाई गई थीं, किंतु गांधीजीको संतोष न हुआ। पूरा घंटा तो उन्हें अपनी मंडलीको धमकानेमें ही लगा। अंतमें तय यह हुआ कि थोड़ा-सा सामान छोड़कर बाकी अदनसे वापस कर दिया जाय। गांधीजी बोले——"आज तो मैं इस सामानको देखकर घबरा गया हूं। कागज रखनेके लिए भी यह लोग पेटी लाये हैं, मानो मैं अब पुरानी आदतोंको छोड़नेवाला हूं।"

पांच बजे अपने बैठनेका स्थान चुननेके लिए गांधीजी छतपर आये। मैंने कहा——"जहाजका अंतिम हिस्सा तो बहुत हिलता है, इसलिए काफी कष्टप्रद है। एक मिनिट भी मुझसे तो यहां खड़ा नहीं रहा जाता, इसलिए इसे देखना ही फिजूल है। जहाजके बीचका हिस्सा ही देख लें।" गांधीजी कहने लगे कि इसको भी तो देख लें और मेरे लाख विरोध करनेपर भी जहाजके अंतिम हिस्सेका एक खतरनाक कोना पसंद किया। मैं तो हक्का-बक्का-सा रह गया। क्या कोई समझदार मनुष्य ऐसी तकलीफसे भरी हुई निकम्मी जगह पसंद कर सकता है? किंतु——"यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः"।

गांधीजीकी विचार-शृंखला यह थी कि जो स्थान अच्छा है, वहां हमारे बैठनेसे किसीको कष्ट हो सकता है, अच्छे स्थानमें एकांत भी संभव नहीं——इसलिए यह बुरा स्थान ही हमारे लिए

अच्छा है। मैंने कप्तानतक दौड़-धूप की, उनका विचार बदले, इसकी काफी कोशिश की। पर "हजरते दाग जहां बैठ गये बैठ गये !" गांधीजी तो टस-से-मस भी न हुए। आखिर पंडितजीने अपना जोर आजमाना शुरू किया। उन्होंने आग्रह किया कि गांधीजी फर्स्टका टिकट बदला लें। संध्या-समय घूमते-घूमते मैंने भी थोड़ा आग्रह किया। गांधीजीने पूछा--तुम क्यों आग्रह करने लगे? मैंने कहा--आपने टिकट तो सेकंडका लिया है। किंतु आपकी प्रतिष्ठाके कारण फर्स्टके तमाम हक आपको स्वतः मिल जायंगे। फर्स्टकी छतपर कनात लगाकर आपके लिए प्रार्थना-घर बनवा दिया है, क्या यह उचित नहीं कि आप फर्स्टके पैसे ही दे दें? गांधीजीने कहा--नहीं, इस दलीलसे तो यह सार निकलता है कि हम फर्स्टके तमाम हकोंको स्वयं त्याग दें। नतीजा यह हुआ कि गांधीजीने फर्स्टकी छतपर घूमना उसी समय बंद कर दिया। प्रार्थनाकी कनात तो एक ही दिन काम आई। आज तो उन्होंने प्रार्थना अपने निकम्मे स्थानपर ही की।

प्रार्थना करते समय जहां गांधीजी ध्यान करते थे, वहां मैं यह सोचता था कि भगवन्, प्रार्थना समाप्त हो तो यहांसे उठूं। बैठनेवाले दो मिनिटमें ही आधे बीमार हो जाते हैं। वमन नहीं हुआ, यह खैरियत है। कहते हैं जहां चांद-सूरजकी गति नहीं है, वहां भगवान् विराजते हैं। हमारे जहाजके बारेमें यह कुछ अंशमें कहा जा सकता है कि जहां भले आदमियोंकी होश-हवासके साथ गति नहीं है, वहां गांधीजी विराजते हैं। कोई मिलनेवाला जाता है, तो एक मिनिटसे ज्यादा रुकना भी पसंद नहीं करता। बंबईसे चलते ही समुद्र तूफानी हो गया। इसलिए गांधीजीका स्थान ऐसा रहता है, जैसे हिंदुस्तानका डोलर-हिंडा।

तीन

३१ अगस्त, '३१
'राजपूताना' जहाज

पंडितजीकी भी बात सुनिए । आज तीसरा दिन है, पर पंडितजीकी प्रायः एकादशी ही चलती है ! बात यह है कि पंडितजीका रसोइया बीमार है और आटे-सीधेके बक्सका कहीं पता नहीं । पंडितजीसे लाख प्रार्थना की कि महाराज, बोटका चावल-आटा लेना बुरी बात नहीं है, किंतु पंडितजी कहते हैं कि भूख लगेगी तब ले लेंगे, अभी भूख नहीं लगी है, तबीयत सुधर रही है । परसों और कल तो थोड़ा-थोड़ा दूध ही लिया । सामानकी पेटीके लिए सारा जहाज छान डाला, किंतु वह भी ऐसी गायब हुई कि न पूछिए । पंडितजी खुद तो खाते नहीं, अपने रसोइयेसे कहते हैं––बैजनाथ ! थोड़ा खा लो । बैजनाथ क्या खाये ? पेटी तो ब्रह्मलोक चली गई, जहाजका सामान अभीतक पंडितजीने लेना स्वीकार नहीं किया । पर आज पंडितजीको मना लिया है और जहाजके सामानसे रसोई बनेगी । पंडितजी कुछ कमजोर हो गये हैं, लेकिन वैसे प्रसन्न हैं । समुद्रके तूफानके कारण दो दिन कुछ व्यथित रहे । समुद्र कुछ शांत हो रहा है । शामको रसोई भी बनेगी ।

पंडितजीने आनेमें काफी कष्ट उठाया है । पंडितजीकी प्रकृतिके मनुष्यको ऐसे सफरमें बहुत कष्ट है, किंतु देशके लिए पंडितजी सबकुछ सहन कर लेते हैं । सच पूछिए तो पंडितजीकी दृष्टिमें यह जहाज नरक है, इंग्लिस्तान रौरव है । आज कहते थे––तुमने अच्छी-सी केबिन मेरे लिए सुरक्षित की, किंतु वह है तो केबिन (कोठरी) ही । यदि स्वदेशका काम न हो, तो पंडितजी ऐसा सफर करनेकी स्वप्नमें भी इच्छा न करें । पंडितजीमें प्रेम और आशावादकी कमी नहीं । पेटी गायब हो गई, सारा जहाज छान डाला, किंतु पंडितजी अब भी कहते हैं कि पेटी

जरूर मिलेगी, गायब कैसे हो सकती है? इसका उत्तर मैं क्या दूं?

गोविंदजीने कल और आज पेड़ोंसे ही काम चलाया है। रामेश्वरजीने तो कहा था कि पेड़े ज्यादा ले लो, मगर मुझे क्या खबर थी कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होनेवाली है!

चार

१ सितंबर '३१
'राजपूताना' जहाज,

समुद्र आज बुधवारको शांत हुआ है। सूरजिया तो अब भी बीमार है। पारसनाथजीने आज होश संभाला है। मैंने एक बेला भोजन नहीं किया। गांधीजी मजेसे हैं। पंडितजीकी रसोई बनने लगी है—जहाज के सामानसे ही। गोविंदजीको पेड़ोंसे कुछ तकलीफ-सी हुई। महात्माजीकी प्रार्थना रोज सुबह-शाम होती है। हिंदुस्तानी आते हैं। अंगरेज दूरसे ही नजर बचाके देखते रहते हैं। आज रातको अदन पहुंच जायंगे। पंडितजी कहते थे कि "जहाज कैदखाना है। देखो, कैसी लीला है! हम पैसे भी देते हैं और कैदमें भी रहते हैं।" कल बेचैन होकर कहने लगे—

सीतापति रघुनाथजी, तुम लगि मेरी दौर;
जैसे काग जहाजको सूझत और न ठौर।

और ठौर यहां कहां सूझे!

पांच

३ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

अदन अभी छोड़ा है। अदनमें महात्माजीका खूब स्वागत-सत्कार हुआ। संमानपत्र दिया गया; उन्होंने जवाब दिया। स्पीच हिंदुस्तानके अखबारोंमें छपी होगी। महात्माजीको ३२५ गिनी

भेंट की गई। सत्कारमें अरब, यहूदी, हिंदुस्तानी सभी शामिल थे। हजारों आदमियोंकी कतार रास्तेमें खड़ी हो गई, जो अपनी अरबी भाषामें सत्कार-सूचक नारे लगा रही थी। जिस गाड़ीमें महात्माजी थे, उसमें सरोजिनी नायडू, सर प्रभाशंकर पट्टणी और मैं था। कोई-कोई अरबी तो पट्टणीजीको ही गांधीजी समझ बैठते थे, क्योंकि पट्टणीजीकी सफेद दाढ़ी, सफेद अंगरखा, सफेद साफा सचमुच महात्मापन-सा ला देता है। मीटिंगमें भी एक हजार मनुष्य थे। अधिकतर हिंदुस्तानी ही थे।

पंडितजीके लिए यहांसे आटा-सीधा और दो घड़े पानीके ले लिये गये हैं। हम लोगोंने मजाक किया कि पंडितजीके गंगाजलके घड़े अब अरबके पानी से भरे जायंगे, और अरबका पानी पीकर पंडितजीको शौकतअलीका साथ देना होगा। किंतु पंडितजी कहते हैं कि पानीका विष सुबह-शामकी संध्यासे धो डालूंगा!

× × ×

महात्माजी लंदन पहुंचते ही क्या करेंगे, यह जाननेकी सबको उत्सुकता है। आर० टी० सी० में करीब १०० मेंबर हो गये। ऐरे-गैरे नत्थू-खैरे, सभी इसमें शामिल हैं। यह हिंदुस्तानके प्रतिनिधियोंकी कांफ्रेंस तो है नहीं, गांधीजीको छोड़ प्रतिनिधि कहे जानेवाले सज्जन सारे-के-सारे मनोनीत हैं, चुने हुए नहीं। कुछ अच्छे हैं, तो बहुतसे रद्दी हैं। असलमें तो यह सब-के-सब सरकारके प्रतिनिधि हैं। ऐसी हालतमें अकेले गांधीजी क्या कर सकेंगे? और बहसमें भी सरकारी हां-में-हां मिलानेवाले खैरख्वाहोंकी आर० टी० सी० में कहां कमी है? ऐसी अवस्थामें वहांके लोग सहज ही कह सकते हैं—गांधीजी, आप ठीक कहते हैं, मगर आपके मुल्कके लोग सहमत नहीं हैं,—इसलिए आपकी बात कैसे मान ली जाय?

ऐसी स्थिति अवश्य ही समयकी बरबादी करनेवाली होगी। न कुछ काम ही बनेगा। इसलिए निश्चय ही गांधीजी ऐसे झमेलेमें न पड़ेंगे। **"गढ़ां राजा मढ़ां जोगी!"** जबतक गांधीजी भी अपनी

मढ़ीमें बात न करेंगे तबतक कोई सुननेवाला नहीं। इसलिए विचार इस तरहसे है कि आर० टी० सी० तो हाथीके दांतकी तरह शोभा बढ़ाती रहे और गांधीजी खानेके दांतकी तरह मंत्रि-मंडल एवं वहांके नेताओंसे अलग मंत्रणा करें, उन्हें यहांकी हालत समझावें, वहांकी जनताको उकसावें और इस तरह किसी निर्णयपर पहुंचें। यदि वहांका मंत्रिमंडल अलग बात करनेकी इच्छा प्रकट न करे, तो गांधीजी फेडरल कमेटीमें अपना वक्तव्य सुना देंगे और कहेंगे, मुझसे बहस करनी हो तो करो। इतनेपर भी यदि गांधीजीको सब धान बाईस पसेरी बनानेकी चाल रही तो गांधीजी तुरंत ही वापस चले आयंगे।

मेरा अपना मत है कि जाते ही गांधीजी वापस आनेका निर्णय सुना देंगे। मंत्रिमंडल गांधीजीसे अलग मंत्रणा करेगा और शेषमें गांधीजी ही आर० टी० सी० बन जायंगे।

× × ×

फेडरेशनकी ओरसे सरकार सर पुरुषोत्तमदासको और मुझको मनोनीत करना चाहती है, ऐसा गांधीजीसे शिमलेमें कहा गया। मैंने सर पुरुषोत्तमदाससे बंबईमें ही कह दिया था कि या तो तीनों जायंगे या बिल्कुल न जायंगे। गांधीजीने बंबई पहुंचते ही वाइसरायको एक जोरदार चिट्ठी लिखी है। मेरा खयाल है कि गांधीजीके पैर जम गये तो तीनों बुला लिये जायंगे। वर्ना एक भी नहीं।

छह

४ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

कल गांधीजीने फिर आर० टी० सी० के कामके संबंधमें चर्चा छेड़ी। मैंने आश्चर्य प्रकट किया कि "सरकार आपको क्या समझकर बुला रही है? आप क्या मांगनेवाले हैं, यह तो

सरकार जानती है। करांचीका प्रस्ताव भी सामने है। फिर भी आपको बुलाती है, इसके यह माने हैं कि आपकी मांग पूरी होनेवाली है।" गांधीजीने कहा, "मैंने तो कोई बात छिपाकर नहीं रखी है। इर्विनसे समझौता हो चुका, उसके बाद रात ८ बजे इर्विनसे मैंने कहा, 'देखो, मुझसे समझौता करते ही मुझे लंदन क्यों भेजते हो ? मेरी मांग तो जानते हो। यह तुमसे पूरी होनेवाली नहीं है, इसलिए मुझे भेजनेसे फायदा ?' इर्विनने कहा कि तुम्हारी मांग कुछ भी हो, तुम न्याय-मार्गपर ही चलोगे, ऐसा मानकर तुमसे जानेका आग्रह करता हूं।" फिर मैंने चर्चा छेड़ी कि हां, मांग किस तरह रखी जाय। गांधीजीने कहा, "ग्रामीणकी तरह सीधी-सादी भाषामें। यदि वहां कोई लंबी-चौड़ी बातें करेगा, राजबंधारणकी बारीकियोंकी बहस करेगा, तो मैं कह दूंगा कि मैं तो मूर्ख हूं, ये बातें नहीं समझता। किंतु मैं फलां-फलां बात चाहता हूं और मुझे ये दे दो। यदि मेरी बात कोई सुनना नहीं चाहेगा तो मैं कह दूंगा, मुझको क्यों बैठाके रखते हो, वापस हिंदुस्तान भेज दो।" मैंने पूछा—वापस आनेके पहले आप वहां सार्वजनिक व्याख्यान तो देंगे ही ? महात्माजीने कहा—"वह भी मैकडानल्ड या बाल्डविन चाहेगा तो ही, नहीं तो बंदमुंह वापस चला जाऊंगा। मेरा स्वभाव यही है कि जिसके यहां रहना, उसका गुलाम बनकर रहना। आखिर उनका मेहमान बनके जाता हूं और जबतक वहां रहूंगा, उनको क्षोभ हो, ऐसा कोई काम नहीं करना चाहता।" फौज और अंगरेज व्यापारियोंके स्वत्वोंके बारेमें भी काफी बहस हुई। हर बात इनकी निराली है। हम लोग हर बातको सांसारिक दृष्टिसे देखते हैं। यह तात्त्विक और धार्मिक दृष्टिसे देखते हैं। १००-२०० साल भी लग जायं तो चिंता नहीं, किंतु स्वराज्य नहीं, रामराज्य ही चाहिए। बारीकीके साथ अध्ययन करता हूं, तो ऐसा पता चलता है कि इनकी मांग जितनी ही बड़ी हो, उतनी ही उसमें कमी करनेके लिए गुंजाइश है। समझानेके लिए यों कहना चाहिए कि १ मन

गांधीजी जहाज़ के कप्तान के साथ

जहाज़ पर गांधीजी : नवाब भोपाल के साथ

मक्खन निकाले हुए दूधकी अपेक्षा यह १ सेर मक्खनवाला दूध लेना पसंद करेंगे । तादाद शायद घटा देंगे, किंतु किस्म नहीं घटायंगे । मैंने कहा कि अध्ययन कर लीजिए, नहीं तो कहीं बात बिगड़ जायगी । किंतु गांधीजी कहते हैं कि "आर० टी० सी० में अबतक क्या हुआ, यह मैंने आजतक नहीं पढ़ा है, अब पढ़ लूंगा । विद्या मेरा बल नहीं है, न मुझे बहस करनी है । मुझे तो अपना दुःख रोना है, इसमें विद्वत्ताकी कौन-सी बात है ?" यह है भी सच, क्योंकि रोना और हँसना स्वाभाविक होता है। रोनेमें विद्वत्ता नाटकवाले ही दिखाते हैं। गांधीजी तो स्वाभाविक रुदन करना चाहते हैं।

इधर पंडितजी मुझसे कहते हैं कि अमुक विषयका अध्ययन करो, अमुक इतिहासको देख लो, अंगरेजोंकी करेंसी-नीतिका इतिहास तैयार कर लो। मालवीयजी अनेक अस्त्र-शस्त्रोंसे लड़ेंगे, गांधीजी केवल एक ही बाणसे। मालवीयजी कहते हैं, वहां प्रचार-कार्य करेंगे । गांधीजी कहते हैं, प्रचार भी हमारे दुश्मनोंकी आज्ञा होगी, तभी करेंगे । बिल्कुल नया ढंग, नया विचार, नया तरीका है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि लंदनवाले भी अचरज करेंगे कि कैसे आदमीसे पाला पड़ा है !

कल लिखते-लिखते गांधीजीका दाहिना हाथ बिल्कुल बेकार हो गया। अब बायेंसे लिखते हैं। रोज छः मील घूम लेते हैं। दूध १ सेर लेने लग गये हैं। गांधीजी कहते थे, चर्चिलसे लंदनमें अवश्य मिलना है, क्योंकि वह दुश्मनी रखता है, गालियां देता है। 'बर्नार्ड शॉसे मिलेंगे क्या ?' यह पूछनेपर कहा कि उससे क्या मिलेंगे !

सात

५ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

भोपालने महात्माजीको बुलाकर कहा कि हिंदू-मुसलमान-

समस्या सुलझानेके लिए आप पृथक् निर्वाचन स्वीकार कर लें। महात्माजीने कहा कि न तो मुझे पृथक् निर्वाचनसे शिकायत है, न संयुक्त निर्वाचनका मोह हैं, किंतु मैं अंसारीके बिना कुछ भी न करूंगा। कहते थे नवाबको यह बुरा-सा लगा। गांधीजीने कहा कि, अपने मित्रोंसे मैं हर्गिज बेवफाई नहीं करूंगा। अंसारीके पीठ-पीछे मैं कोई निर्णय नहीं करना चाहता। भोपालने कहा कि अंसारीको कैसे बुलावें ? महात्माजीने कहा कि लंदन जाकर उद्योग करो, मैं तो कर ही रहा हूं।

दो घंटेतक फिर मेरे और महात्माजीके बीच निजी व राजनैतिक बातें हुईं। मेरा यह तो अनुमान है कि महात्माजीकी मांग तो पूरी होनेवाली नहीं है, किंतु इतना मिल जायगा, जिससे अन्य लोग संतुष्ट हो जायं। महात्माजी कहते हैं, यह भी अच्छा है। कहते थे, मेरी दूसरी लड़ाई जमींदारों, धनिकों व राजाओंसे होगी, किंतु वह लड़ाई मीठी होगी।

रातकी प्रार्थनामें अंगरेज भी आते हैं। अधिक नहीं सिर्फ ५–७। एक मुसलमानने पूछा–"प्रार्थनासे फायदा ?" महात्माजीने कहा––"मुझमें कुछ अक्ल मानते हो, तो समझ लो कि लाभके लिए ही प्रार्थना करता हूं।" महात्माजीने बताया कि उन्हें न ईश्वरमें विश्वास था, न प्रार्थनामें और पीछे उनको इसका ज्ञान हुआ। अब यह हाल है कि उनके शब्दोंमें "मुझे रोटी न मिले तो मैं व्याकुल नहीं होता, पर प्रार्थनाके बिना तो पागल हो जाऊं।" उन्होंने कहा कि "मेरा सारा-का-सारा जीवन प्रार्थनामय ही है और इसका सुख इस मार्गमें जानेसे ही अनुभव हो सकता है। बुद्ध, ईसा, मुहम्मद तीनोंने प्रार्थनाकी सार्थकता स्वीकार की है। मैं ईश्वरका दर्शन नहीं करा सकता। ईश्वर अनुभवमय है, इसलिए अनुभवसे ही जाना जा सकता है। प्रार्थना द्वारा उसका अनुभव होता है। जो अनुभव लेना चाहता है, जिसे शांतिकी आवश्यकता है, वह प्रार्थना करे।"

आठ

६ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

आज रविवारको जहाजके गिर्जेमें प्रार्थना थी। कप्तानने महात्माजीको न्यौता दिया था। पंडितजी और हम भी गये थे। भजन, ध्यान, गुणगान होता रहा। पंडितजीका हाथमें बाइबिल लेकर ईसाइयोंके साथ ध्यानावस्थित होना विशेषतापूर्ण था। पंडितजीको जो कोई लकीरका फकीर बताता है, वह मूर्ख है। पंडितजी अरबका पानी पी सकते हैं, गिर्जेमें प्रार्थना कर सकते हैं, फिर भी परम सनातनी हैं, क्योंकि उनके हृदयमें ईश्वर विराजमान हैं। जो हो, पंडितजीका बाइबिल हाथमें लिये हुए ध्यानमग्न होना, यह दर्शन दुर्लभ है।

गांधीजीको कप्तान ऊपर ले गया और वहां जहाजका संचालक चक्कर उनके हाथमें देकर उनसे जहाज चलवाता रहा। किसीने मजाकमें कहा कि हिंदुस्तानके जहाजका गांधीजी संचालन कर रहे हैं।

स्वेज और पोर्ट सईदमें अरब लोग आयेंगे और गांधीजीका सत्कार होगा। स्वेजमें प्रवेश होते ही जाड़ा शुरू हो गया। कल तक तो बेहद गर्मी थी।

नौ

७ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

स्वेज नहर पहुंचनेपर काफी चहल-पहल मच गई। जहाजपर मुसाफिरोंकी डाक्टरी परीक्षा ली गई। परीक्षाका तो केवल नाम था। डाक्टर मिश्र-सरकारकी ओरसे आया था, वह मुसाफिरोंको केवल देख लेता था और पास कर देता था। अंतमें गांधीजीकी पार्टी आई तो डाक्टर उठ खड़ा हुआ और हाथ मिला-

कर कहने लगा कि मेरी इस किताबमें आप अपने हाथसे दो शब्द लिख दें। इस तरह गांधीजीकी शारीरिक परीक्षा समाप्त हुई। इसके बाद जहाजपर मिश्रके राष्ट्रीय नेता, अखबारनवीस, फोटोग्राफर पहुंचे। प्रायः लोग गांधीजीसे हाथ मिलाकर उनके हाथ चूमते जाते थे। जहाजपर बड़ी भीड़ होगई। जहाज छूटनेका समय आया, तब बड़ी मुश्किलसे लोगोंको किनारे उतारा। चित्र उतारनेवालोंने तो ज्यादती शुरू करदी। एक क्षण गांधीजीको आरामसे नहीं बैठने दिया। जिधर मुंह फेरें, उधर ही चित्रवाले अपना चित्रयंत्र लिये झपटनेको तैयार। कम-से-कम २००-३०० चित्र लिये होंगे। लंदनके 'डेली टेलीग्राफ' का प्रतिनिधि भी आया था। उसने भी बहुत-से प्रश्न किये। अंतमेंजहाज चला। कुछ प्रतिनिधि तो साथ हो लिये, जो रातभर सफर कर सुबह पोर्टसईदमें उतरे।

रातकी प्रार्थनाके समय मिश्रके बहुत-से प्रतिनिधि प्रार्थनामें भी शरीक हुए। एक जर्मनने अहिंसाके संबंधमें महात्माजीसे प्रवचन करनेको कहा, जिसपर महात्माजीने आध घंटेतक अत्यंत सुंदर प्रवचन किया। मिश्रवाले उसे अपनी भाषामें लिखते जाते थे। जबतक महात्माजी सो न गये तबतक महात्माजी की हर बातको, हर क्रियाको मिश्रवाले नोट करते रहे। मैंने उनसे मिश्रका हाल पूछा। मालूम हुआ कि मैं पिछली बार आया था उसके बाद उन्होंने कोई उन्नति नहीं की है। दृढ़, निःस्वार्थ नेताओंकी कमी है, तो भी नहासपाशाका काफी आदर है। नहासपाशाने महात्माजीको प्रेम-भरा स्वागतका एक तार भी भेजा है और लौटती बेर काहिरा पधारनेकी प्रार्थना की है।

सुबह पोर्ट सईदमें भी काफी लोग आये। शौकतअली पिछले जहाजसे उतरकर मिश्रमें और फिलस्तीनमें भ्रमण कर रहे थे। वह भी हमारे जहाजमें आज सवार हो गये हैं। सुना है कि वह मुस्लिम मुल्कोंमें मुसलमानोंका संगठन करनेके लिए दौरा करने गये थे। गांधीजीकी निंदा की और इधरके मुसलमानोंके साथ

ऐक्य स्थापित करनेका प्रयत्न किया। मिश्रवाले कहते थे कि इनका कहीं स्वागत नहीं हुआ। नहासपाशाने तो कुछ खरी बातें भी सुना दीं। इस तरफके मुसलमान राष्ट्रवादी हैं। मजहबी पागलपन उनमें नहीं है। इसलिए मौलाना साहबका रंग फीका ही रहा।

पंडितजीके विषयमें यहां छपा है कि पंडितजी कीचड़की एक मटकी लाये हैं और रोज कीचड़का एक बुत बनाकर पूजा करते हैं। पीनेका पानी गंगाका आता रहेगा, जिसका कुल खर्च १५,०००) बैठेगा, जो उनके एक धनी मित्रने दिया है।

स्वेजके किनारे-किनारे कहीं-कहीं अरब लोगोंकी भीड़ मिलती थी जो चिल्लाकर महात्माजीका स्वागत करती थी।

पोर्ट सईदमें लोग महात्माजी के लिए फल-फूल लाये थे, जिनमें ताजा आम और खजूर भी थे। आम उतने स्वादिष्ट नहीं होते, जितने अपने यहां के, किंतु खजूर देखनेमें अत्यंत सुंदर थे——खानेमें भी होंगे।

दस

९ सितंबर, '३१
'राजपूताना' जहाज

अभी-अभी मौलाना मुझसे बातें कर गये हैं। मैंने पूछा कि जनाबकी सेहतका क्या हाल है? कहने लगे—"जिंदा तो हूं।" मैंने कहा कि "आप आ गये यह खुशनसीबी है। अब लंदन पहुंचनेसे पहले इस झमेलेको तय कर लीजिये; वर्ना दोनों कौमोंकी बरबादी होनेवाली है।" मौलानाने कहा—"छोटा-सा मसला है, गांधीजीके हाथमें है।" मैंने कहा कि "सब कुछ आपके हाथमें है। नवाबसाहब भी साथ हैं, अंसारीको बुलवा लें और बैठकर तसफिया कर लें।" पर होना-जाना कुछ है नहीं।

भोपालने फिर गांधीजीको बुलवाया। शौकतअली भी मौजूद थे। ४ घंटे तक बातचीत हुई, पर कोई नतीजा न निकला। महात्माजीने पूछा कि तुम जो कुछ कहते हो उसे मैं मान भी लूं,

तो तुम्हारा रुख लंदनमें राष्ट्रीय मांगोंके प्रति क्या होगा ? शौकत-अलीने कहा कि मैं तो सरकारका ही साथ दूंगा।

दूसरे दिन मालवीयजी को भी भोपालने बुलवाया। आर० टी० सी० में मालवीयजीका क्या रुख रहेगा, इसीकी चर्चा थी। पंडितजीने कह दिया कि "जीवन-मरणका प्रश्न है, मैं लंदन इसलिए नहीं आया कि पौने सोलह आना लेकर जाऊं। गांधीजीका हर्गिज साथ न छोड़ूंगा।" भोपालने कहा—"फिर तो बात टूटेगी।" पंडितजी ने कहा कि, चाहे जो हो।

लंदनसे एंड्रूजका तार आया है कि सरकारकी राय है कि महात्माजी फोकस्टन (लंदनसे ८० मीलपर एक शहर) में उतरकर वहींसे बजाय रेलके मोटरमें आवें। महात्माजीने तार दे दिया कि मुझे कोई आपत्ति नहीं है। लंदनमें बहुत भीड़ होनेकी संभावना है। सरकार नहीं चाहती कि ऐसा स्वागत हो, इसलिए यह चाल है।

सप्रूका भी तार आया है कि रविवार १३ की रात को आपको प्रधान एवं अन्य प्रतिष्ठित आदमियोंसे मिलना है। महात्माजी कहते थे कि उसी रातको मैं तो अपना दांव फेंक दूंगा और फिर आवश्यकता होगी तो दूसरे स्टीमर से ही लौट आऊंगा। उनके स्वागतको रोकनेके लिए उन्हें मोटर द्वारा बुलाया गया है, इससे तो मुझे नीयत साफ नहीं दीखती।

ग्यारह

११ सितंबर, '३१

ट्रेन में

आज सुबह मारसेल्स पहुंचे। वही पुरानी बात है। सैकड़ों चित्र खेंचनेवाले अपने यंत्र लिये और बीसों पत्र-प्रतिनिधि मौजूद थे। स्टीमरपर आनेकी इजाजत नहीं थी, तो भी भीड़ काफी थी। लंदन, अमेरिका, जर्मनी, नारवे आदिके पत्र-प्रतिनिधि खूब

आये थे। सबने भिन्न-भिन्न प्रश्न किये। लंदनवाले तो छिद्रान्वेषण करनेको ही आये थे। खूब झूठी-मूठी खबरें बनाकर भेजते हैं। मिश्रसे तो एक फौजी अफसरने महात्माजीको एक चोली भेजी है और कहा है कि तुम इसे पहन लो। महात्माजीने उसे रख लिया है।

११ बजे महात्माजी जहाजसे नीचे उतरे और शहरमें फ्रांसके छात्रोंने जहां मीटिंग की थी, वहां गये। बीचमें जहां-जहां गाड़ी रुकती, वहां-वहां लोगोंकी भीड़ जमा हो जाती, और 'गांधी चिरजीवी हो' की ध्वनि होती। लोगोंको गांधीजीके दर्शनका काफी कौतूहल था। मीटिंगमें बहुत आदमी नहीं थे। प्रवेश-पत्रके बिना सभा-भवनमें प्रवेश निषिद्ध था, किंतु बाहर खासी भीड़ थी। यहांके सार्वजनिक उत्सवोंमें चित्र-यंत्रवालों और पत्र-प्रतिनिधियोंकी बहुतायत रहती है। सो यहां भी थी। यों कहना चाहिए कि गांधीजीके रोजके चित्रोंका औसत करीब २०० पड़ जाता है। और १०-१५ पत्र-प्रतिनिधि वक्तव्य ले जाते हैं।

पत्र यहां व्यापारकी दृष्टिसे ही चलाते हैं और जो प्रतिनिधि आते हैं, वे सच्ची ही खबर नहीं भेजते। झूठ तो प्रायः सभी लिखते हैं, किंतु जो मित्र हैं वे भी अच्छी बातें बनाके लिखते हैं। उदाहरणके लिए एक अमेरिकन पत्र-प्रतिनिधिने हालमें लिखा कि गांधीजी इतने दयालु हैं कि पासमें रहनेवाली बिल्लियोंको भी साथ में सुला लेते हैं। एक अंगरेज पत्रकारने, जो विरोधी दलका है, लिख मारा कि "गांधीजी जहां जाते हैं, अंगरेजोंको गालियां देते हैं। अबतक इनका कहीं सम्मान नहीं हुआ, इसलिए इनका चेहरा उतर गया है। क्रोधसे भरे रहते हैं। विलायती कपड़ोंका ही उपयोग करते हैं, देशी तो केवल दिखानेके लिए है," इत्यादि, इत्यादि। यह पत्रकार साबरमती-आश्रममें कुछ दिन ठहरा था, वहां इसकी बीमारीमें गांधीजीने अपने हाथसे इसकी सेवा की थी। मारसेल्ससे जब चले तो दसों पत्रकार साथमें ही गाड़ीमें बैठ गये। उनमें यह भी था। गांधीजीने उसे अपने डिब्बेमें

बुलाया और खूब डांटा। वह भी शर्मके मारे बर्फ तो हो गया, पर अपनी आदतसे शायद बाज न आयेगा।

बारह

१२ सितंबर, '३१
लंदन

पेरिस गाड़ी सुबह ६ बजे पहुंची। वहां भी वही भीड़, वही चित्रवाले, वही प्रेस-प्रतिनिधि !

११ बजे गाड़ी बूलों पहुंची। यहांसे इंग्लिश चैनल पार कर हमलोग १ बजे फोकस्टन पहुंचे। वहां भी खूब भीड़ थी, किंतु पुलिसके प्रबंधके कारण कोई जहाज तक पहुंच नहीं पाता था। यहां दो सरकारी गाड़ियां आई थीं। एकमें गांधीजी बैठ गये, एकमें मालवीयजी और मैं। पर पुलिसने ऐसा जाल रचा था कि दोनों गाड़ियोंको शुरूसे ही अलग-अलग रास्तोंसे लंदनको रवाना किया।

लंदनके निकट पहुंचनेपर पंडितजीने गाड़ीवानसे कहा कि "मुझे पेशाब करना है, पहले मुझे आर्यभवन ले चलो।" गाड़ीवानने कहा कि "महाशय, मुझे हिदायत है कि सीधे आपको सभास्थलपर ले जाऊं। (पेशाब रास्ते में ही कहीं करा सकता हूं) मैं आर्यभवन नहीं जा सकता। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि हम लोग कैदी हैं। हमें कैसा स्वराज्य मिलनेवाला है, इसकी कल्पना इस स्वागतसे ही की जा सकती है।

हजारों आदमी विक्टोरिया स्टेशनपर, यह जानते हुए भी कि गांधीजी रेलसे नहीं आयेंगे, जमा थे और यद्यपि वर्षा हो रही थी, फिर भी हजारों आदमी सभा-भवनके बाहर गांधीजीकी बाट जोह रहे थे।

यह जान लेना आवश्यक है कि इंग्लिस्तान भी एक नहीं है। एक इंग्लिस्तान है दीन-दुखियोंका, गरीब साधारण जनताका,

दरिद्र-नारायणका—जो गांधीजीका स्वागत कर रहा है; जिसे न हिंदुस्तानसे द्वेष है, न जिसका यहां कोई चलन है। दूसरा इंग्लिस्तान है ठाकुरोंका, जो हुकूमत करते हैं और जिनके हाथमें सत्ता है। यों कहा जा सकता है कि यदि इस श्रेणीके दस आदमी भारतको स्वराज्य देना चाहें तो दे सकते हैं। जो गांधीजीका 'हुर्रेहुर्रे' करके स्वागत करते हैं वे हजारों होने पर भी पंगु हैं। राज अब भी यहां ठाकुरोंका ही है। कहनेके लिए ही मजदूर-पार्टी है और मजदूर-सरकार थी। मजदूर-सरकारने भी जब चीं-चपड़ की तो सेठोंने उधार देनेसे इंकार कर दिया, जिससे मैकडोनल्ड साहबको होश संभालना पड़ा, 'गांव राम' का स्वागत ठीक है, पर 'ठाकुरों' की नीयत अच्छी नहीं।

सभाभवनमें १५०० के लगभग आदमी थे, जिनमें ६०० के करीब देशी थे। स्वागताध्यक्षका व्याख्यान अच्छा था, किंतु गांधीजीका भाषण तो अपूर्व था। लोग बिल्कुल मोहित हो गये। बैठे-बैठे हजारों हैट-धारियोंके बीच कमली ओढ़े गांधीजीका प्रवचन ऐसा हुआ मानो अंगरेजोंका ईसामसीह बोल रहा हो। गांधीजीने कहा, "तुम्हारी सरकार इस समय अपने आय-व्ययका हिसाब बराबर कर रही है, इसलिए बड़ी व्यस्त है, किंतु जबतक हमारा हिसाब बराबर न करोगे तबतक तुमने कुछ नहीं किया, ऐसा समझना होगा। मैं देश-भक्त हूं, किंतु मेरी देश-भक्ति जीव-भक्ति है। मैं सबका भला चाहता हूं।" इन बातोंपर तालियोंकी गड़गड़ाहट हुई।

स्वागतके बाद गांधीजी अपने डेरे गये, जो मजदूर-मुहल्लेमें है। पंडितजी आर्य-भवनमें आ गये। सभा-भवनसे निकले, तो पंडितजी गद्गद् हो गये थे। एकांतमें मुझसे कहते थे कि "गांधीजीके शरीरकी मुझे बड़ी चिंता है, यह कपड़े नहीं पहनते, कहीं इनको कुछ हो न जाय। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि रोग हो तो मुझे हो, मौत आये तो मुझे आये।" मैंने कहा कि पंडितजी, आप अपनी ही चिंता करें, इनकी नहीं। पंडितजी बंबई

छोड़नेके बाद काफी दुर्बल हो गये हैं और ढीले होते जाते हैं। इनके शरीरकी मुझे तो बड़ी चिंता है।

तेरह

१३ सितंबर, '३१
'लंदन'

गांधीजीका स्थान बहुत छोटा है, आराम भी नहीं है, किंतु लोग प्रेमसे उनकी सेवा कर रहे हैं। बिना तनख्वाहके नौकर हैं। अखबारवाले बिना पैसे लिये अखबार दे जाते हैं। सैकड़ों आदमी मकानके सामने खड़े जय-जयकार करते रहते हैं।

आज रातको प्रधानमंत्रीसे बातें होंगी और शायद कलतक नाड़ीका पता चल जाय।

चौदह

१५ सितंबर, '३१
'लंदन'

आज शामको भोजनके बाद हम लोग किंग्सले हाल पहुंचे। मुझे खासकर तीन बातोंके संबंधमें महात्माजीका विचार जानना था। पहला प्रश्न तो यह था कि यहांसे हट चलनेकी राय अब होती है क्या? देवदासने कल टेलीफोन किया था कि बापू कुछ-कुछ स्थान-परिवर्तनके पक्षमें हो चले हैं और संभव है कि आर्य-भवनमें धूनी रमा दें। किंग्सले हाल आना-जाना आसान काम नहीं है। भारतवासी-मात्र चाहते हैं कि महात्माजीके और उनके बीच इतनी दूरी न हो। पर स्थान बदलनेके पक्षपाती इससे भी जोरदार दलील पेश करते हैं। किंग्सले हाल एक सार्वजनिक संस्था है। महात्माजीके वहां ठहरनेसे इस संस्थाके कार्यमें विघ्न-बाधा पड़ रही है। कार्यकर्त्ताओंकी संख्या थोड़ी है, उनपर बोझ बहुत भारी आ पड़ा है। अभी उस दिन टेलीफोनपर रहनेवालेकी

ओरसे दबी जबान शिकायत हुई थी कि मुझे सांस लेनेकी भी फुरसत नहीं मिल रही है। मैंने उस दिन संस्थाकी परिचालिका मिस लेस्टरसे बातें की थीं—अन्य कार्यकर्त्ताओंसे भी कहा था कि हम लोग हाथ बंटानेको तैयार हैं। पर लेस्टर बराबर यही कहती जाती है कि हमें कोई कष्ट या असुविधा नहीं है। अगर होगी तो कह देनेमें हमें कुछ भी संकोच न होगा। महात्माजीके लिए इतना ही बस है। उनके सामने और दलीलें भी पेश की गईं—लेस्टरकी आपमें पूरी भक्ति है, पर भारतवर्षके राजनैतिक आंदोलनसे उसकी पूरी सहानुभति नहीं; इस संस्थाके सभी ट्रस्टी आपको उस दृष्टिसे नहीं देखते जिस दृष्टिसे लेस्टर देखती है, इत्यादि, इत्यादि। पर इनका महात्माजीपर कुछ भी असर न पड़ा। आज मेरे पूछने पर वह कहने लगे :

"आज फिर मेरी लेस्टरसे इस संबंधमें बातें हुई हैं। मैंने उससे कहा कि मेरे यहां रहनेसे तुम्हारी संस्थाकी किसी प्रकारकी क्षति हो या तुम लोगोंको किसी कठिनाईका सामना करना पड़े तो मुझे स्पष्ट बता देना—तुम्हारे और मेरे बीच संकोचका पर्दा नहीं रहना चाहिए। पर लेस्टरने फिर मुझे विश्वास दिलाया कि 'आपके यहां रहनेसे न तो हम लोगोंको कष्ट है, न हमारी संस्थाके काममें बाधा पड़ रही है, बल्कि आपके रहनेसे इसका खासा उपकार हुआ है। कुछ ऐसे लोग, जो इससे विमुख या हमारे विरोधी हो रहे थे, अब हमारे यहां आने लगे हैं और हमारा साथ दे रहे हैं।' लेस्टरकी बातका मुझे विश्वास है और मैं यहांसे अन्यत्र जानेका विचार नहीं करता।"

यह गरीबोंका मुहल्ला है और इसमें संदेह नहीं कि इस श्रेणीके लोगोंके हृदयमें गांधीजीके प्रति प्रेमका समुद्र उमड़ पड़ा है। भावके भूखे महात्माजी इनसे अलग होनेका अभी कोई कारण नहीं देखते।

मीराबेन और लेस्टर एक-दूसरीसे कुछ खिची-सी रहती हैं। इसकी चर्चा चलनेपर महात्माजीने कहा कि "मैं तो मीरा-

बेनको ही दोष दूंगा। उसके मनमें यह आता है कि जिस हदतक मैंने त्याग किया है, उसी हदतक दूसरे भी क्यों न करें। पर मनुष्यको अपने त्याग या तपका कुछभी अभिमान नहीं करना चाहिए। मुझसे जहांतक बन पड़ता है, मैं करता हूं—दूसरे अगर उस हदतक नहीं बढ़ सकते तो मैं इसका बुरा क्यों मानूं ? त्यागकी राहपर कदम रखनेवालेको आरंभमें अभिमान-सा हुआ करता है, मुझे भी किसी समय हुआ था, पर मैं तो शीघ्र ही संभल गया।"

महात्माजीके कानों तक लोगोंकी यह टिप्पणी भी पहुंच चुकी है कि लेस्टर अपनी संस्थाका विज्ञापन करनेके लिए ही उन्हें अपना अतिथि रखना चाहती है। इस विषयमें महात्माजीने कहा—

"अगर वह ऐसा चाहती है और उसकी संस्थाका कुछ विज्ञापन होता है तो क्या हर्ज है ? आखिर उसका और उसकी संस्थाका व्रत तो दीन-दुखियोंकी सेवा करना ही है।"

दूसरा प्रश्न शार्टहैंड टाइपिस्टके विषयमें था—उसे कबसे आना होगा ? उत्तर मिला कि "अभी उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। लिखने-लिखानेका समय ही कहां मिलता है ? लेखके रूपमें जो कुछ सामने आता है उसको 'पास' कर देता हूं। महादेवकी भाषा तो मेरे 'अनुकूल' हो गई है। उसकी लिखावट भी अच्छी होती है। पर प्यारेलालमें यह बात नहीं है। उसके अक्षर बहुत खराब होते हैं और उसकी भाषा भी पूरी संतोषजनक नहीं होती। विद्वान् तो अच्छा है, पर उसकी भाषा या रचना बराबर एक-सी नहीं होती। जब उसका ध्यान अपने विषयपर केंद्रीभूत रहता है तब तो अच्छा लिख लेता है, नहीं तो त्रुटियां रह जाती हैं।"

सुना था कि कांफ्रेंस आने-जानेके लिए मोटरकी नई व्यवस्था आवश्यक है, पूछने पर मालूम हुआ कि यह खबर भी गलत है। एक हिंदुस्तानी डाक्टरने महात्माजीको पहुंचानेका काम अपने जिम्मे ले रखा है। कल गलतीसे उनकी मोटर एक दरवाजे पर खड़ी रही और महात्माजी दूसरे दरवाजेसे बाहर निकले।

लाचार टैक्सीसे आना पड़ा। जब महात्माजीको पीछे मालूम हुआ कि डाक्टरसाहबकी गाड़ी मौजूद थी, तब उन्हें इसका खेद हुआ। कहते थे कि मेरा मौनका दिन था, इसलिए पूरी तहकीकात न करा सका—महादेवसे पता न लग सका कि गाड़ी किधर खड़ी है। व्यर्थ एक कौड़ी भी खर्च न हो, इसका महात्माजीको पूरा ध्यान रहता है। फिर भी उन्होंने कुछ पैसे बचा ही लिये। मालवीयजीके लिए भी टैक्सी करनी थी, सो उन्हें अपनी टैक्सीमें ही आर्य-भवन छोड़ते आये। पर आगेके लिए उन्होंने कहा कि भाड़ेकी गाड़ीकी कोई जरूरत नहीं है।

मैंने कहा—तो तीनों बातोंके संबंधमें मुझे जो सूचना मिली थी वह गलत निकली।

महात्माजी—बिल्कुल गलत !

मैं—तीनों-की-तीनों अखबारी खबरें साबित हुईं ?

महात्माजी खिलखिलाकर हँस पड़े।

× × ×

आजकी कांफ्रेंसमें महात्माजीका जो भाषण हुआ है, उसकी चर्चा छिड़ी। सभी मुक्तकंठसे उसकी प्रशंसा कर रहे हैं और कहते हैं कि ऐतिहासिक दृष्टिसे यह अमर होगा। कांफ्रेंसमें जानेसे पहले महात्माजी भारत-सचिवसे मिले थे। उसका रुख उन्होंने अच्छा पाया। महात्माजीने उसे स्पष्ट-से-स्पष्ट शब्दोंमें यह बताया कि वह ब्रिटिश शासन-पद्धतिके परम अनुरक्त भक्तसे उसके कट्टर शत्रु कैसे बन गये। उन्होंने कहा कि "एक समय था जब मैं तुम्हारे शासनको अपने देशके लिए हितकर समझता था और उसकी भलाई मनाता था। मेरा दावा है कि संसारमें शायद ही कोई दूसरा मनुष्य होगा, जिसने मेरी ही तरह पवित्र और निःस्वार्थ भावसे तुम्हारा साथ दिया होगा—तुम्हारा भला चाहा होगा। फिर क्या कारण कि मैं आज दोस्तसे दुश्मन बन गया हूं और तुम्हारी जड़ सींचनेके बजाय उसे खोदनेमें दिन-रात लगा हुआ हूं ?"

होरने कहा—"महात्माजी, मैं तो संस्कारसे ही दूसरे मतका अनुयायी हूं। मेरी शिक्षा-दीक्षा इस प्रकारकी हुई है कि मेरी जातिने भारतवर्षमें जो कुछ किया है, उसका मुझे गर्व है।"

महात्माजीने उत्तर दिया—"तुम्हें गर्व होगा, पर होना नहीं चाहिए। भारतवर्षकी इस समय जो दशा है और दिन-दिन होती जा रही है, वह तुम्हारे लिए अभिमान की नहीं, लज्जाकी बात है। बरसोंसे मेरा अपने देशकी जनतासे घनिष्ठ संबंध चला आ रहा है। गांवोंमें घूमना-फिरना, ग्रामीण लोगोंके साथ उठना-बैठना, उनके सुख-दुःखमें शामिल होना, उनकी कठिनाइयोंकी जांच-पड़ताल कर उसकी पूरी जानकारी हासिल करना—इन बातोंमें तुम्हारा एक भी कर्मचारी मेरी बराबरी नहीं कर सकता। मैंने अपनी आंखों देखा है कि मेरे इन देशवासियोंकी कल क्या हालत थी और आज क्या है, और बहुत-कुछ कटु अनुभव प्राप्त करके मैं इस नतीजेपर पहुंचा हूं कि तुम्हारे हाथों हमारी भलाई नहीं हो सकती।"

होरने कहा कि अभी तो हमारे समझौतेके प्रयासका आरंभ ही हो रहा है; अंत होनेसे पहले आपसे बहुत कुछ बातें करनी हैं।

महात्माजीको इसके बाद ही कांफ्रेंसमें जाना और अपना वक्तव्य सुनाना था। होरने कहा कि मैं चाहता तो नहीं था कि आज आपको कुछ भी कष्ट दूं, पर साथ ही आपसे यथासंभव शीघ्र मिल लेना भी आवश्यक था। महात्माजीके ठहरनेके स्थानके विषयमें पूछताछ की। उन्होंने कहा कि मैं अपने गरीब भाइयोंके बीच बड़े सुखसे हूं। होर बोला कि इंग्लैंडका वास्तविक जीवन भी गरीब लोगोंका ही जीवन है। उसकी बातचीतके ढंगसे महात्माजीको संतोष हुआ। कहते थे कि "उसने न तो हाकिम-हुक्कामकी तरह रूखे-सूखे शब्दोंमें बातें कीं, न कूटनीतिकी भाषाका ही उपयोग किया। मैंने उससे कहा कि मुझसे यह आशा मत करो कि मेरी जबान कभी भी मेरे मनकी बात छिपानेकी कोशिश करेगी हां, मैं यह सर्टिफिकेट जरूर चाहता हूं कि समझौतेके लिए मैंने

कुछ भी उठा न रखा। उसने कहा कि मैं भी आपसे ऐसी ही सर्टिफिकेट पानेका इच्छुक रहूंगा।"

मैं—"तो यह मान लूं कि उससे आपकी जो बातचीत हुई वह आशाप्रद थी?"

सिर हिलाते हुए महात्माजीने कहा कि "नहीं! इतना ही कहूंगा कि मैंने यह आशा नहीं की थी कि वह मुझसे इस हदतक दिल खोलकर बातें करेगा।"

लार्ड सैंकीसे होरकी तुलना होने लगी। महात्माजीने कहा कि उसपर भी मेरी बातोंका अच्छा प्रभाव पड़ा है; पर इसमें संदेह नहीं कि वह होरसे कहीं अधिक चतुर और गंभीर है, इसलिए उसके शब्दोंसे ही उसके हृदयकी थाह मिलनी मुश्किल है। महात्माजीने उसे एक चपत अच्छी लगाई। वह देशी नरेशों-की बात करने लगा, तो महात्माजीने कहा कि "क्या असलियत तुमसे छिपी है? क्या तुम नहीं जानते कि कान्फ्रेंस सरकारकी हां-में-हां मिलानेवालोंसे भर दी गई है? क्या यह भी बताना आवश्यक है कि जिन नरेशोंकी तुम बात करते हो, वे सब-के-सब सरकारके इशारेपर नाचनेवाले हैं? मैं उन्हें या उनकी बातोंको कुछ भी महत्व नहीं देता और जो सच्ची बात है वह तुम्हें भी मालूम है।" सैंकीसे इसका कुछ भी जबाव न बन पड़ा।

महात्माजीके पैर जमते जा रह हैं। उनकी चमकसे दुश्मनोंको भी चकाचौंध लग गई है। लार्ड रीडिंगके पाससे वह दो-तीन बार गुजरे, तो वह खड़ा हो गया और उनसे विशेष बातचीत करने की इच्छा प्रकट की।

चर्चिल अभी स्वयं नहीं मिला है, पर बेटेको भेजा था। अखबारवाले उसे ताना देने लग गये है। 'स्टार' ने लिखा है कि तुम तो बड़े वीर बहादुर हो—शेरोंका सामना करनेवाले हो—पर जब गांधी तुमसे मिलनेको तैयार है, तो दुम दबाकर क्यों भागे जाते हो? बेटेमें बापकी-सी ही तेजी है और उसके विचार भी बिल्कुल वैसे ही हैं। उसने पूछा कि अगर कान्फ्रेंससे कोई भी

नतीजा न निकला—समझौता न हो सका—तो आप क्या करेंगे ? गांधीजीने एक शब्द में उत्तर दिया कि 'सत्याग्रह'; और इसकी व्याख्या-सी करते हुए बोले कि पिछली बार हमलोग जो कुछ कष्ट झेल चुके हैं, उससे इस बार कहीं अधिक झेलनेको तैयार रहना पड़ेगा । उन्होंने उसे मेनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्राचीन ग्राम-संस्थाएं' (एंशियेंट विलेज कम्यूनिटीज) पढ़नेकी सलाह दी, जिससे उसे पता चल जाय कि भारतवासियोंमें स्वराज्यकी क्षमता कहां तक थी और आज भी है । उसने कहा कि मैं पिताको सब बातें सुनाऊंगा । चर्चिलपर इनका कुछ भी प्रभाव पड़ेगा या इनसे मिलनेके फलस्वरूप वह अपनी राह छोड़ देगा, यह आशा तो दुराशामात्र है । फिर गांधीजीका यह प्रयास क्यों ? बात यह है कि वह संसारकी सहानुभूति अपने साथ कर लेनेका मार्ग अच्छी तरह जान गये हैं । उनकी यह विद्या निराली है । महात्माजीने अपनी ओरसे ऐलान कर दिया कि जो मुझे गालियां देते हैं और मेरे कट्टर-से-कट्टर दुश्मन हैं, मैं उनसे भी मिलने और बातें करनेको तैयार हूं । चर्चिल अभीतक चुप है । वास्तवमें महात्माजीके नामसे वह असमंजसमें पड़ गया है । पर वह मिले या न मिले, नैतिक रणक्षेत्रमें इससे महात्माजीके पक्षको ही सहायता पहुंचेगी ।

लार्ड इर्विनको महात्माजीने आते ही तार दिया था कि मैं पहुंच गया हूं, तुम कब और कहां मिल सकते हो ? कहते थे कि उसके उत्तरमें उसने बड़ा ही सुंदर पत्र लिखा है । कहा है कि मैं जान-बूझकर आर० टी० सी० में शरीक नहीं हुआ, क्योंकि मेरा खयाल है कि मैं बाहर रहकर अधिक सहायता कर सकता हूं । वहशीघ्र ही लंदन आनेवाला है ।

शिमलेसे एमर्सनने भी महात्माजीके पत्रका बड़ा ही संतोष-जनक उत्तर दिया है । महात्माजीने उसे बड़ी फटकार बताई थी—उसे बहुत-कुछ भला-बुरा कहा था । महात्माजी कहते थे कि उसका

पत्र पढ़ने ही लायक है। उसने एक तार भी दिया था, पर वह किसी कारणवश महात्माजीको न मिल सका।

मैंने कहा कि "आपने अपना वक्तव्य सुना दिया। सबको मालूम हो गया कि आप क्या चाहते हैं—अब आगे क्या होगा? आप उनके उत्तरकी प्रतीक्षा करेंगे या उत्तर मिले बिना भी कमेटीकी कार्रवाईमें भाग लेंगे?"

महात्माजीने कहा कि "मैं कार्रवाईमें भाग लूंगा। जहां मैं देखूंगा कि कोई ऐसा प्रश्न उपस्थित है, जो कांग्रेसके किसी मूल सिद्धांतसे संबंध रखता है और उसके विषयमें कांग्रेसका मत स्पष्ट कर देना आवश्यक है, वहां मैं अपनी राय जाहिर कर दूंगा। उदाहरणके लिए—वोट देनेके अधिकारका प्रश्न है। अनावश्यक बातोंपर बोलनेका विचार मेरा नहीं है। सैंकी शायद यह नहीं चाहता था कि मैं कार्रवाईमें इस प्रकार भाग लूं। पर जब वह भाग लेनेवालोंकी लिस्ट बनाने लगा तब मैंने भी अपना नाम लिखा दिया। उसे मेरा भाग लेना पसंद नहीं था—यह मैं इसलिए कहता हूं कि मैं उसकी बगलमें ही बैठता हूं और उसने मुझसे इस संबंधमें कुछ भी बात नहीं की। नाम लिखाकर मैंने उससे कह दिया कि तुम चाहे मुझे सबके बाद बोलनेका मौका दे सकते हो।"

मैंने पूछा कि आप जहां कुछ भी न बोलेंगे वहां **'मौनं सम्मति-लक्षणं'** तो न समझा जायगा?

महात्माजीने कहा कि "हर्गिज नहीं। यह तो मैं स्पष्ट कर दूंगा कि प्रत्येक निर्णयको मैं स्वीकार करता हूं—यह कोई न समझे।"

मैंने कहा—मान लीजिए कि उन्होंने इसमें बहुत ज्यादा समय लगा दिया तो आप तबतक उनके उत्तरकी राह देखते रहेंगे?

महात्माजी—"उनका उत्तर क्या होगा, यह तो मुझे कुछ ही दिनोंमें मालूम हो जायगा। पर अगर उन्होंने हमें छोटी

बातोंमें उलझाकर समय बिताना चाहा, तो मैं ऐसा कब होने दूंगा ? मैं भी तो लगाम कसना शुरू कर दूंगा !"

आजके भाषणके संबंधमें मैंने पूछा कि उसके लिए आपने कोई तैयारी की थी क्या ? बोले—"कुछ भी नहीं । चाहता जरूर था कि ऐसे मौकेपर बोलनेके लिए कुछ तैयारी कर लूं, कुछ बातें सोच लूं । पर इसके लिए समय न मिल सका । कल रात कुछ ऐसी ही बाधा पड़ गई कि इस ओर ध्यान न दे सका । आज सुबह दो सज्जन मिलने आ गये । सोचा कि होरसे मिलने इंडिया आफिस जाना है, रास्तेमें कुछ सोच लूंगा । पर गाड़ीमें एंड्रूजका साथ हो गया और रास्ते भर बातें होती रहीं । इंडिया आफिसमें नियत समयसे २० मिनट पहले पहुंचा (कल महात्माजीको कान्फ्रेंस पहुंचनेमें कुछ देर हो गई—भीड़ ज्यादा होनेके कारण गाड़ियोंको रुक जाना पड़ता है, इसलिए आज समय बचाकर चले थे), पर वहां भी कुछ सोचनेका समय न मिला, क्योंकि होरके दो सेक्रेटरी आ गये और उनसे बातें होती रहीं । बस, इतना ही सोच सका कि कांग्रेसके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मुझे बोलना है, इसलिए उसके विषयमें कुछ कहना चाहिए । जो कुछ तैयारी कर सका वह इतनी ही ।"

मैंने कहा कि बिना कुछ भी तैयारीके ऐसा अद्भुत भाषण हो, इसे तो दैवी अनुप्रेरणा ही समझना चाहिए ।

महात्माजी बोले—"बिल्कुल ठीक है । लार्ड इर्विनसे समझौता होने जानेपर मैं पत्र-प्रतिनिधियोंको जो वक्तव्य दिया था, यहां आनेके दिन मेरा जो भाषण हुआ, अमेरिकाके लिए अभी उस दिन जो संदेश देना पड़ा—इनमें किसीके लिए पहलेसे न तो कुछ तैयारी कर सका था, न कुछ सोच ही सका था । ऐन मौकेपर हृदयमें जो आकाशवाणी हुई, उसे दोहरा दिया। यह सब ईश्वरकी अनुकंपाका फल है ।"

आगे क्या होगा, ईश्वर जाने, पर आसार बुरे नहीं हैं। प्रधान मंत्रीकी ओरसे कोई बात अभी तक आशाप्रद नहीं हुई है, पर जैसाकि गांधीजीने कहा——उसका प्रभाव नहींके बराबर रह गया है। अखबारोंमें अभी तक 'मैंचेस्टर गार्जियन' जैसी सचाई और सहानुभूति किसी दूसरेने नहीं दिखाई, यद्यपि उसने भी भूलकर लिख दिया है कि महात्माजीने लंगोटी त्यागकर पाजामा पहन लिया ! महात्माजी यह सुनकर हँसने लगे। 'डेली मेल' महात्माजीको सनकी (फेनेटिकल) लिखता जाता है, पर उसने भी तार द्वारा ३००० शब्दोंका एक लेख इस आशयका मांगा है कि आप क्या चाहते है ? साथ ही वचन दिया है कि लेख ज्यों-का-त्यों छपेगा——एक शब्दका भी हेर-फेर न होगा। महात्माजीने उसे उत्तर दिया है कि अभी तो बहुत-सा काम है, पर समय मिलते ही मैं लेख भेज दूंगा।

पंद्रह

१७ सितंबर, ३'१
लंदन

कल रातको महात्माजीसे फिर मिला था। मुझसे कहा, मैंचेस्टर साथ चलो। मैंने पूछा, बंबईसे तार आया है कि फेडरेशनके प्रतिनिधित्वका क्या होगा ? उसपर महात्माजीने कहा, मैं प्रधान मंत्रीसे कहनेवाला हूं, क्रितु मेरे पांव और जम जायंगे, तब कहना ठीक होगा। यदि यहांसे भागना ही पड़े तो क्या लाभ है ?

महात्माजीकी शरीर-रक्षाके लिए काफी खुफिया तैनात है। कल रातको खुफियावालोंने आकर कहा कि "आपको तो कोई पर्वाह नहीं, किंतु इंग्लैंडमें रहते यदि आपका बाल भी बांका हो जाय, तो हमारा मुंह काला हो जायगा। इसलिए कृपया आप जहां जावें हमें सूचना दे दें, जिससे हमें आपका पीछा करनेमें सुभीता हो।" गांधीजी कहते थे कि भारत-सचिवने भी उनसे

ऐसा ही कहा। फलतः महात्माजी जहां जाते हैं, अपने दौरेकी सूचना खुफियाको दे देते हैं।

एक ग्रामोफोन कंपनीवाला अपने रेकार्डमें महात्माजीका प्रवचन चाहता था। खूब बहस हुई। सारा मसला नीतिकी कसौटीपर कसा गया। अंतमें मांग अस्वीकार की गई। कुछ दिन पीछे बहस-मुबाहसेके बाद यह मांग स्वीकार की गई।

क्लार्क कहता था, "मैंचेस्टरको रोटी फेंक दो और भारतमें रहनेवाले अंगरेज व्यापारियोंकी दिलजमइ कर दो तो तुम्हारा काम शीघ्र बन जाय।" किंतु इनकी दिलजमइ की जाय तो कैसे? इन्हें चाहिए मिश्री और हमलोग बातोंसे ही इन्हें मिठासका अनुभव कराना चाहते हैं!

सोलह

२४ सितंबर, '३१

लंदन

कल रातको हाउस ऑव कामंसमें महात्माजीका भाषण था। श्रोताओंमें सभी लोग मौजूद थे। उपस्थिति २०० के करीब थी, जिसमें प्रायः १५० पार्लमेंटके मेंबर रहे होंगे। कई बारा-दरियोंसे गुजरकर हम लोग सभाके स्थानपर पहुंचे। महात्माजीने अपने भाषणमें कहा कि "हम लोग क्या चाहते हैं और क्यों चाहते हैं, यह मैं एक नहीं अनेक बार बता चुका हूं। हम 'पूर्ण स्वराज' से ही संतुष्ट हो सकते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं कि हम अपनी डेढ़ चावलकी खिचड़ी अलग पकायेंगे। हम भागीदार होकर तुम्हारे साथ रहना चाहते हैं, गुलाम होकर नहीं। हमारी मर्जी-की बात होनी चाहिए—जबतक अपनी भलाई देखते हैं, तुम्हारे साथ रहेंगे, दूसरी बात होते ही संबंधविच्छेद कर लेंगे। पिछली कान्फ्रेंसमें संरक्षणोंपर जोर दिया गया था। पर जो व्यवस्था वहां तजबीज की गई थी, वह न तो 'औपनिवेशिक स्वराज्य'

(डोमीनियन स्टेट्स) था न किसी प्रकारकी स्वतंत्रता। फौज और पर-राष्ट्र-नीति दोनों ही तुम अपने हाथमें रखना चाहते हो। आर्थिक नीतिके संबंधमें भी तुम संरक्षण चाहते हो। फिर जो कुछ देते हो उसका मूल्य ही क्या? तुम कहते हो कि सेना भारत की रक्षाके लिए रहेगी। वास्तवमें उसका होगा भारतको पराधीन रखना, उसके हाथ-पांव हिलने-डुलने न देना! हम अंगरेजोंको हर्गिज निकालना नहीं चाहते। पर हम यह जरूर चाहते हैं कि वे हमारे नौकर होकर रहें, मालिक होकर नहीं।"

इंग्लैंड ने आखिर गोल्ड स्टैंडर्ड छोड़ दिया। भारतवर्ष सोनेसे तो हट गया, पर स्टर्लिंगसे वह अभी तक बंधा हुआ है। शुष्टरने शिमलेमें कुछ कहा और होरने फेडरल कमेटीमें कुछ! जान-बूझकर यहांवालोंने पीछे बेईमानी की है। महात्माजीने इस संबंधमें जो वक्तव्य दिया, वह मुझे बहुत पसंद न पड़ा। मेरे कहनेसे उसमें उन्होंने थोड़ा परिवर्तन भी किया। रातको इस विषयमें उनसे फिर बातें हुईं। मैंने कहा कि आप ऐसे मामलोंमें बिना पूछे ही वक्तव्य दे देते हैं, यह कैसी बात है? बड़ी बहस हुई। महात्माजीकी दलील थी कि मेरे शब्दोंका वह अर्थ ही नहीं हो सकता, जो तुम करते हो। बोले कि "वकालतमें जितनी अच्छी बातें सीखनेको मिलती हैं, उन्हें मैंने ग्रहण कर लिया है। मैंने एक भी ऐसी बात नहीं रखी थी जिसके लिए कोई मुझे पकड़ सके।" खैर, अंतमें यह ठहरा कि भविष्यमें बिना सलाह लिये ऐसे विषयपर कुछ भी न कहेंगे।

भारत-सचिवकी ओरसे एक पत्र आया था। उसका जवाब भेज दिया है।

मेरे विरुद्ध काफी प्रचार किया गया है। इसका फल यह हुआ कि मेरा अविश्वास किया जाता है। हां, जबसे कांफ्रेंसका मेंबर बना हूं तबसे लोगोंसे मिलना-जुलना ज्यादा होता है।

अटलसे मिला था। यहीं अचानक मुलाकात होगई। इस सप्ताह लोथियन और बेनसे मिला। अच्छी बातें हुईं।

पर बातोंसे तो अब काम आगे नहीं बढ़ता।

पंडितजीकी तंदुरुस्ती अच्छी है।

उस दिन श्री विट्ठलभाई पटेल महात्माजीके पास पहुंचे और कहने लगे कि फेडरल कमेटीमें आपका जो भाषण हुआ, उसे पढ़कर तो मैं बेहोश-सा होगया। यह आपने क्या कह डाला? महात्माजी बोले कि "मैंने तो एक ही चार्ली चैपलिनका नाम सुना था, मुझे क्या खबर थी कि अपने यहां भी एक चार्ली चैपलिन है! खैर, तुम लोगोंको मेरा भाषण पसंद नहीं है, तो तुम अपना मुख्तारनामा वापस ले सकते हो।"

महात्माजीकी बातें निराली हैं। उस दिन कहते थे कि मुझे बच्चों के साथ खेलना जितना अच्छा लगता है, उतना आर० टी० सी० में शरीक होना नहीं लगता। गरीबोंकी मंडली ही महात्माजीकी आर० टी० सी० है।

सत्रह

३० सितंबर, '३१
लंदन

महात्माजी मैंचेस्टरसे लौट आये। वहां उनका अच्छा प्रभाव पड़ा।

हिंदू-मुस्लिम-प्रश्न अभी तक हल नहीं हो सका है। आशा भी कम है। सोमवार (२८ सितंबर, ३१) को कान्फ्रेंसकी अल्प-संख्यक-दल-कमेटीकी मीटिंग थी। प्रधान मंत्रीने उसमें प्रजा-प्रतिनिधियोंको इस हिसाबसे बिठाया—सबसे पहले श्रीमती नायडू, फिर गांधीजी, फिर मालवीयजी, फिर मैं।

प्रधान मंत्रीका भाषण मुझे अच्छा नहीं लगा। उसमें ईमान-दारी नहीं थी। खुशामद काफी थी; हमारे दर्शनशास्त्रोंकी भरपूर प्रशंसा भी थी, पर इन ऊपरी बातोंके सिवाय और कुछ न था। महात्माजीके सामने, सभा-विसर्जनके बाद, उसने हाथ जोड़े

श्री महादेव देसाई : लेखक : श्री देवदास गांधी

जहाज़ पर गांधीजी, श्री महादेव देसाई और श्रीमती मीराबेन के साथ

गांधीजी फाकस्टन बंदर पर

और कहा कि कभी आपके आश्रममें आकर अपने पापोंको धोऊंगा ! मालवीयजीने सर्वप्रथम दो दिनके लिए सभा स्थगित करनेको कहा। मोहलत मिली भी, पर किसीसे कुछ न बन पड़ा। गांधीजी और आगाखांमें बातें जरूर चलती हैं, परंतु उसका मोहलतसे कोई संबंध नहीं। कुछ 'प्रतिनिधियों' का रुख लज्जित करनेवाला था। इनमें कोई कनफटे जोगीकी तरह गाली देकर मांगता है, कोई घरू ब्राह्मणकी तरह मांगता है, पर हैं दोनों भिखमंगे। यद्यपि यह स्पष्ट है कि ये ब्रिटिश सरकारके ही आदमी हैं और अपने मालिकोंके मनकी ही बात कहने-करनेवाले हैं तो भी आपसमें कुंजड़ोंकी-सी लड़ाई शर्मानेवाली है।

हिंदू-मुस्लिम-समस्याके संबंधमें गांधीजीकी आगाखांसे तीन-चार घंटे बातचीत हुई। उनकी तो वही पुरानी कहानी है कि अंसारीको बुलाओ ! कागजपर दस्तखत भी करके दे आये हैं और कह दिया है कि जो कुछ अंसारी कहेगा, मान लूंगा और देशसे मनवानेकी पूरी कोशिश करूंगा। अब सबकी गर्दन अंसारीके हाथमें है, पर महात्माजी कहते हैं कि इसमें चिंताकी कोई बात नहीं है। गांधीजीपर मुसलमान काफी बिगड़े हैं कि अंसारीको इतना वजन क्यों ? और अंसारीको बुलानेवाले भी नहीं हैं, लेकिन जान पड़ता है कि टूटनेकी नौबत न आवेगी। अगर टूट भी जाय, तो हमारा बुरा नहीं है। आज फिर गांधीजी मुसलमानोंसे मिलनेवाले हैं। कुछ लोगोंका प्रस्ताव था कि अंगरेजों-की पंचायतसे निपटारा करा लिया जाय। किंतु पंडितजी और गांधीजीकी राय कम है। यह सही भी है। जहां ऐसी पंचायतका प्रस्ताव किया, वहां हमारी कमजोरी साबित हो जायगी और हम स्वराज्य मांगनेके लायक नहीं रहेंगे।

मार्लेसे मिला था। यह पार्लमेंटका मेंबर है। कहता था कि कुछ होना-जाना नहीं है, बातें बनाके वापस कर देंगे। उसका खयाल है कि नये चुनावमें कंजर्वेटिव बड़ी तादादमें

आ जायंगे और सब तरहसे दमन करेंगे। मेरे पूछनेपर उसने कहा कि आवश्यक हुआ तो यहांसे पैसे और फौज दोनों ही भेजे जायंगे। अध्यापक हैरेल्ड लैस्की (लंदन-विश्वविद्यालयमें राज-नीति-विज्ञानका अध्यापक और इस देशका एक प्रसिद्ध विद्वान्) का मत और है। उसने कहा कि यहांकी सेना अधिक कालतक वहां ऐसे कामके लिए नहीं ठहर सकती। लैस्कीसे अर्थशास्त्र-संबंधी बातें काफी हुईं। हमारे राजनैतिक मसलेपर भी बातचीत हुई। उसका भी यही कहना है कि कुछ होनेवाला नहीं है। लैस्कीका खयाल है कि यहां भयंकर स्थिति पैदा होनेवाली है। कल एक बहुत बड़ा जुलूस निकला था, जिसपर पुलिसकी लाठियां बरसी थीं। कम्युनिस्ट पार्टी जोर पकड़ती जा रही है।

कल महात्माजीने कहा कि पंडितजीको हिंदू-मुस्लिम-प्रश्नके संबंधमें समझाओ। मैंने निवेदन किया कि आपकी आत्मा जो कहे आप कर लें। पंडितजी भी मान जायंगे।

कल भारत-मंत्रीसे महात्माजीकी तीन घंटेतक बातचीत हुई। महात्माजीने कहा कि "समय बरबाद न करो; देनेके संबंधमें या तो सीधी-सीधी बातें करो या वापस जाने दो। मुझे इससे कुछ भी दुःख न होगा, पर समयकी बरबादी से होगा।" होरने कहा कि आपको व्यर्थ न रोकूंगा। उसका भी विचार है कि कान्फ्रेंसमें कुछ तय होना नहीं है। उसने छोटी-सी कमेटीका प्रस्ताव किया तो महात्माजी बोले कि "मैं पहलेसे ही जानता हूं कि कान्फ्रेंस द्वारा कुछ तय होनेवाला नहीं है। मैं तो तुम्हारे निमंत्रणके कारण इसमें शरीक हुआ हूं। पर कमेटीमें भाग लेनेसे पहले यह तय कर लेना जरूरी है कि तुम कहांतक जानेको तैयार हो। पहले मूल सिद्धांतोंपर हम सहमत हो लें, फिर और बातें कर लेंगे।"

होर—मैं पहले इर्विनसे बातें करूंगा। आपकी तरह हमारे भी आदर्श हैं, पर आपकी तरह हम यह नहीं मानते कि हिंदुस्तानमें

हमसे इतनी ज्यादा बुराई हुई है। हमसे बहुत-कुछ भलाई हुई है। वर्तमान स्थितिमें हम आपको सेना और अर्थ-विभागका अधिकार कैसे दे सकते हैं ?

महात्माजी—भूलसे मनुष्य बुरी बातको अच्छी मान लेता है। तुम्हारे इस समय जो आदर्श हैं, उन्हें बिना चोट लगे तुम न भूलोगे !

होर—मैं मानता हूं कि ऐसा हुआ करता है, पर इस समय तो हमारा यही विश्वास है कि हमारे आदर्श झूठे नहीं हैं।

महात्माजी—करेंसी और एक्सचेंजके संबंधमें निर्णय करने-से पहले तुमने हमारे विशेषज्ञोंको क्यों नहीं बुलाया ?

होर—मैं मानता हूं कि भूल हुई।

भूल-सुधारके नामपर अब वह यह करनेवाला है कि मुझको यहांके प्रसिद्ध अर्थशास्त्रज्ञ और अपने सलाहकार सर हेनरी स्ट्राकोशसे मिलावेगा। हम दोनोंकी बहस होगी और गांधीजी उसे सुनकर यह निर्णय करेंगे कि सरकारने जो कुछ किया, वह अच्छा था या बुरा। इसके लिए अगला मंगलवार निश्चित हुआ है। होर अपने दो-एक मित्रोंको भी बुलानेवाला है। संभवतः ये मित्र सर मानिकजी दादाभाई-जैसे लोग होंगे। वास्तवमें हम दोनोंके बीच यह एक दंगल-सा होगा। पर मुझे तनिक भी आशंका नहीं है कि वह मेरी दलीलको किसी भी अंशमें कमजोर साबित कर सकेगा।

कल बेंथलसे महात्माजीकी बहुत-सी बातें हुईं। उसने मेरा जिक्र किया और मुझे गरम मिजाजका बताया। उसका कहना था कि बिड़लाका आपपर असर पड़ जाता है। महात्माजीने कहा कि मुझपर किसीका भी जल्दी असर नहीं पड़ता। बेंथलने मुझे मंगलवारको निमंत्रित किया है। देखें, क्या बातें होती हैं।

आज प्रधान मंत्रीसे महात्माजी मिले। बड़ी दिलचस्प बातें हुईं। होरके संबंधमें महात्माजीकी जितनी अच्छी धारणा

हुई उतनी प्रधान मंत्रीके संबंधमें नहीं। उसने कहा कि "तुम बार-बार पूछते हो कि क्या दोगे? पर यह बताओ कि तुममें क्या-क्या लेनेकी ताकत है?"

महात्माजी—"तो तुम मुझे ललकारते हो। मैं यहां आता ही क्यों? मैं वहीं बैठा-बैठा सबकुछ ले लेता। आज तुम मुझे वापस जाने दो, मैं जो लेना चाहूंगा, ले लूंगा। कान्फ्रेंसको तुमने अपने पिट्ठुओंसे भर दिया। अगर तुम मुझे अपना प्रतिनिधि बनाकर हिंदुस्तान भेजो, तो मैं तुम्हें सौ ऐसे आदमी और ला दूं जो किसी प्रकार का समझौता न होने दें। तुम्हारी कान्फ्रेंसमें जो अछूतोंका प्रतिनिधि है, उसे किसने अपना प्रतिनिधि चुना? मेरा तो दावा है कि अछूतोंका सच्चा प्रतिनिधि मैं हूं। ऐसे-ऐसे आदमियोंको जमाकर उनके बलपर तुम मुझे ताना देते हो कि तुममें क्या लेनेकी ताकत है! अगर तुम्हारा दिल पाक-साफ है, तो तुम हमें इस शर्तपर स्वराज दे दो कि हम आपसके झगड़े निपटा लेंगे, फिर देखो कि हम प्रश्नको हल कर लेते हैं या नहीं।"

बड़ी अच्छी फटकार थी। प्रधान मंत्री बगलें झांकने लगा। कहा कि हम दोनोंकी अपनी-अपनी कठिनाइयां हैं।

महात्माजीने उत्तर दिया—"मेरी नहीं, तुम्हारी कठिनाइयां हैं।"

उसका अच्छा असर न पड़नेपर भी महात्माजी प्रफुल्लित थे। रंग-ढंगसे उत्साह काफी जान पड़ा—मेरा खयाल है कि महात्माजीसे लड़ाई मोल लेनेकी मूर्खता यहांवाले न करेंगे। इनकी नीयत तो बेहद खराब है, पर यहांकी स्थिति ऐसी बुरी होती जा रही है कि कान्फ्रेंस टूटने न देंगे। लैस्कीने कहा था कि बुधको सैंकी मिलकर बातें करेगा। उसकी जगह प्रधान मंत्री खुद मिला। कल पंडितजीसे उसकी बातें होनेवाली हैं। पर एक बार मामला रंगपर आये बिना कुछ होनेवाला नहीं है। महात्माजी संभवतः शीघ्र ही वैसी परिस्थिति उत्पन्न कर देंगे।

एक्सचेंजका अध्याय अभी समाप्त नहीं हुआ है । प्रायः प्रत्येक देश सोनेसे विदा लेता जा रहा है । इसका सबसे बड़ा असर यह हुआ है कि देने-लेनेकी जो बंधी रकमें थीं वे आप-ही-आप घट गईं । कर्जदारोंका कर्ज, पूंजीवालोंकी पूंजी कम होगई । स्थिति खराब है, इसलिए अभी बाजार सुधरनेकी आशा नहीं है ।

खुफियावाले बराबर महात्माजीके साथ उनकी हिफाजतके लिए चलते हैं । उनकी गाड़ीके आगे पुलिसकी गाड़ी चलती है । जहां भीड़ नजर आई वहां इस गाड़ी की घंटी बजी और पुलिसके सिपाहियोंने रास्ता साफ कर दिया ।

अठारह

१ अक्तूबर, '३१
लंदन

आज अल्पसंख्यक-दल-कमेटीकी फिर बैठक थी । महात्माजीने कल मुसलमानोंसे कह दिया कि "मैं साफ-साफ बता दूंगा कि मौजूदा हालतमें समझौता मेरे बसकी बात नहीं है । अगर कुछ नहीं होता तो मैं कान्फ्रेंससे हट जाता हूं ।" इसपर उन लोगोंने आग्रह किया कि आप समझौतेके लिए एक छोटी कमेटी बना दें और उसमें एक बार फिर प्रयत्न कर देखें कि कुछ तय होता है या नहीं । इसलिए फिर एक सप्ताहके लिए कमेटीका कार्य स्थगित किया गया । समझौतेकी कमेटी बन गई है । मुझे भी उसका मेंबर रखा है ।

इन कमेटियोंमें कुछ होना नहीं है । मैंने महात्माजीसे कहा भी कि ऐसी बीसों कमेटियां पहले बैठ चुकीं, आपने यह फिर बला क्यों मोल ली ? अंसारीके बिना आप तो कुछ कमोबेश करनेवाले नहीं और अन्य लोगोंसे तो अनंतकालतक भी समझौता नहीं होनेका है । महात्माजी कहते हैं, "यह कमेटी तो मुझे नीचा दिखानेके लिए बनाई गई है और यह जानते हुए भी मैंने ही इसका संचालन करना स्वीकार किया है, किंतु इसमें भी मेरी कोई हानि

नहीं है। अंतमें मैं तो अपना निर्णय दे दूंगा, चाहे कोई माने या न माने।" मुझे उनकी यह बात नापसंद है। किंतु गांधीजी सब कुछ समझकर ही करते हैं, इसलिए देखें क्या होता है।

अबतकका निचोड़ तो यह है कि न तो हम तिल घटे न चावल बढ़े। जहां-के-तहां ध्रुवकी तरह बैठे हैं। यह भी स्पष्ट है कि अबतक यहांके किसी प्रतिष्ठित नेताने जीभ नहीं जमाई है, तो भी मेरा ऐसा खयाल है कि अबतककी सारी बातें 'बिलैया दंडवत्' हैं। या तो यों कहना चाहिए कि दोनों दल सलामी उतार रहे हैं। असल मुठभेड़ अगले सप्ताहमें हो जायगी। उसके बाद या तो उस पार या इस पार। मुझे तो अबतक यही विश्वास है कि कोई रास्ता निकलेगा। लेकिन यह स्पष्ट है कि महात्मा-जीको छोड़कर सब यहां तेज-हीन-से हो रहे हैं। कुछ तो लंदनके सामने हक्के-बक्के हो गये, कुछ महात्माजीके सामने दब गये, पर तो भी किसीमें जिसको हम 'झाड़ा-फाड़ा' कहते हैं, वह करनेकी शक्ति नहीं है। विचार करते-करते लोग बुड्ढे हो गये, किंतु 'अब भी वह विचार, १०० वर्ष बाद देखो तो वही विचार' यह हाल है।

प्रधान मंत्रीने आज महात्माजीसे कहा कि कल मैंने जो कुछ कहा, उसका आपने कुछ भी बुरा तो नहीं माना! मैंने महात्माजीसे कहा कि होरका आपपर अच्छा प्रभाव पड़ा और प्रधान मंत्रीका बुरा, पर अंतमें प्रधान मंत्री ही आपका साथ देगा। इसपर श्रीनिवास शास्त्रीने कहा कि "दोनोंमें कोई साथ न देगा। प्रधान मंत्री से कुछ भी आशा करना व्यर्थ है। यह पक्का साम्राज्यवादी है और मौका पड़नेपर अपने सिद्धांतोंको ताकपर रख देता है।"

उन्नीस

४ अक्तूबर, '३१
लंदन

आज बेंथलसे दिनमें भोजनके समय देरतक बातें हुईं।

उसकी पत्नी भी मौजूद थी। पर हम लोगोंकी बातचीत अलग हुई।

मैंने आरंभमें ही कहा कि "मुझे तुम लोग गरम मिजाजका बताते फिरते हो और मेरा विश्वास भी कम करते हो। ऐसी अवस्थामें मुझे डर है कि हम दोनोंकी स्पष्ट बातें न हो सकें। पर अगर ऐसा हुआ तो इससे कुछ भी लाभ न होगा।"

बेंथलने कहा कि विश्वास रखो, मैं साफ-साफ बातें करूंगा। फिर हम दोनोंकी जो बातचीत हुई उसका सारांश इस प्रकार है:

मैं---हमलोगोंका खयाल है कि कान्फ्रेंसके कारण समयकी बरबादी हो रही है। सरकारने इसे अपने खुशामदी टट्टुओंसे प्रायः भर दिया है और इसके द्वारा कुछ भी काम बनना असंभव है। अगर सचमुच समझौता करना चाहते हो तो पहले मूल बातें निश्चित हो जानी चाहिए---यह मालूम हो जाना चाहिए कि तुम कहांतक आगे बढ़नेको तैयार हो। मूल निश्चित हो जानेपर शाखा और पल्लवसे संबंध रखनेवाली बातें एक विचार-समितिके हवाले कर दी जायंगी।

बेंथल---एक दल यहां अवश्य इस बातके पक्षमें था कि समय नष्ट करके सबको योंही वापस कर दिया जाय। पर दूसरे दलका---और यह दल प्रभावशाली है---विचार हुआ कि नहीं, समझौता अवश्य हो जाना चाहिए। मैं जो कुछ कहता हूं उसकी प्रामाणिकताका तुम पूरा विश्वास कर सकते हो। ऐसे काम में अधीर होना ठीक नहीं। सालभर भी इस कामके लिए थोड़ा ही समझना चाहिए। मैं नाम नहीं बता सकता, पर मैं जिस दलकी बात करता हूं, उसकी पूरी राय है कि कुछ तय अवश्य हो जाना चाहिए।

मैं---साल भी लगे तो परवा नहीं, बशर्ते कि सचाई हो---समझौतेकी पूरी ख्वाहिश हो।

बेंथल---मैं यह मानता हूं, पर जहां तुम्हारी ओरसे कानून

द्वारा हमें बहिष्कृत करनेकी बातें होती हैं, वहां समझौता कैसे हो ?

मैं—इस संबंधमें तो गांधीजी आश्वासन दे ही चुके हैं, मैंने भी जातिगत बहिष्कारके विरुद्ध मत प्रकट किया है।

बेंथल—पर वर्किंग कमेटीकी जो रिपोर्ट निकली है, उसे देखो। उसमें तो भारतवासियोंकी ओरसे जो प्रस्ताव किये गये हैं, उनका उद्देश यही है कि अंगरेजोंको इस क्षेत्रसे निकाल बाहर किया जाय।

मैं—असलमें परिस्थिति और वातावरणको देखना चाहिए। मौजूदा हालतमें हमें यह जरूर कहना पड़ता है, पर हमें पूरा अधिकार मिल जाय तो हमारा रुख बदल जायगा।

बेंथल—गांधीजी इस बातपर जोर देते हैं कि आजतक जो कुछ हो चुका है, उसकी हम पूरी जांच करेंगे। मसलन वह इस बातपर तुले हुए हैं कि जितने पट्टे सरकार द्वारा दिये जा-चुके हैं उनकी जांच हो और यह देखा जाय कि कहां-कहां पक्षपात हुआ है। पर यह कैसे पार पड़ेगा ? न जाने कितने हजार पट्टे होंगे। किस-किसकी जांच होगी ?

मैं—जांच उन्हींकी होगी, जिनके बारेमें लोगोंको शिकायत होगी। पर इस विषयमें तुम गांधीजीका समाधान करा दो। वास्तवमें मेरी उपयोगिता तो तब होगी, जब तुम दोनोंकी बातें हो लेंगी और यह निश्चित हो जायगा कि समझौतेकी संभावना है। तुम अपनी रक्षाकी बात करते हो, पर भारतवासियोंकी रक्षा कैसे हो ? सिंधिया-कंपनी मौतकी राह देख रही है, उसकी रक्षाका क्या उपाय है ? किसी भी तरह हम उसे बचानेका प्रयत्न करते हैं तो तुम्हारी ओरसे यह शिकायत होती है कि हम तुम्हें मारते हैं।

बेंथल—तुम इंचकेपकी संपत्ति ले लो और अपने उद्योग-धंधेकी रक्षा करो। सरकार खास कानून बनाकर ऐसी संपत्ति अपना ले तो हमें कोई आपत्ति न होगी। रक्षा करनेके और भी

उपाय हैं। इस देशमें विदेशी रंगके बहिष्कारके लिए खास एक्ट बना हुआ है। उसमें लेसंस लेनेका ऐसा विधान है कि विदेशी रंगके व्यापारके लिए वह मिल ही नहीं सकता। तुम भी कुछ ऐसे ही नियम बनाकर अपने उद्योग-धंधोंकी रक्षा कर सकते हो।

मैं—हमें नामसे नहीं, कामसे मतलब है। कोई भी अच्छा रास्ता बताओ, हम उसे मान लेंगे। यह जरूर है कि हमारे यहां एक दल कानून-बहिष्कारका पक्षपाती है, पर हम उसे मना लेंगे।

बेंथल—समझौतेकी पहली सीढ़ी है हमारे व्यापार-संबंधी अधिकारोंका सुरक्षित हो जाना।

मैं—अंगरेज व्यापारियोंके प्रतिनिधि तुम हो, कांग्रेसके प्रतिनिधि गांधीजी हैं। तुम दोनों एकत्र होकर बातें कर लो। अगर समझौता हो जाय तो तुम उनका पूरा साथ दो। न हो सके, कांफ्रेंस निष्फल हो जाय, तो हमलोग अपने-अपने घरकी राह लें।

बेंथल—मेरी भी यही राय है।

मैं—अब जितने विषय हैं, उन्हें एक-एक करके लो और प्रत्येकके संबंधमें अपनी राय जाहिर करो।

बेंथल—फौजके बारेमें मेरी कोई वकत नहीं, इसलिए मैं कुछ कहना नहीं चाहता। पर हां, हमारी ओर कोई टस-से-मस होनेको तैयार नहीं है।

मैं—मैं तुम्हें यह कह देना चाहता हूं कि गांधीजी भी इस विषयमें टस-से-मस होनेको तैयार नहीं हैं। पर तुम उनकी बात तो सुनलो कि वह क्या चाहते हैं, अधिकारका वह क्या अर्थ करते हैं।

बेंथल—मैं इतना जरूर कहूंगा कि फौजके लिए हठ करना ठीक न होगा। आखिर किसी राष्ट्रके जीवनमें दस-बीस बरस कितने दिन होते हैं!

मैं—बेशक, मगर यह तो पक्का हो जाय कि इतने दिनों बाद हमारा पूरा अधिकार हो चलेगा।

बेंथल—इसकी बातें होंगी। अब मैं कर्जकी बात लेता हूं। मेरी सलाह है कि भूलकर भी तुम कर्ज चुकानेसे इंकार मत करना।

मैं—इंकार तो करते नहीं। हमारा तो यह कहना है कि न्यायसे हम जिसके देनदार साबित न हों, वह हम न दें।

बेंथल—जो हो चुका, हो चुका। जो कर्ज है, उसे तुम कबूल कर लो। हां, यह हो सकता है कि झगड़ा मिटानेके लिए इंग्लैंड तुम्हें एक सालाना रकम दे दिया करे।

मैं—मतलब रुपयेसे है, चाहे वह किसी भी रूपमें मिले। इन दोनों बातोंपर हमलोग बहुत-कुछ सहमत जान पड़ते हैं। अब आर्थिक संरक्षणोंकी बात लो। हमारी स्वतंत्रताको नियंत्रित करनेके दो उद्देश्य हो सकते हैं—या तो हमारा भला चाहते हो या अपने हित या स्वार्थको सुरक्षित रखना चाहते हो। अगर तुम यह साबित कर दो कि तुम जैसा नियंत्रण चाहते हो, वह हमारी भलाईके लिए है तो हम तुम्हारी बात मान लेंगे। पर तुम्हीं विचार कर देखो कि वैसी परिस्थितिमें हम अपनी क्या उन्नति कर सकेंगे, अपने गरीब भाइयोंको क्या आराम पहुंचा सकेंगे? भारत-सरकारका सालाना बजट प्रायः १३० करोड़ रुपयेका होता है। रेलवे, फौज, कर्ज और पेंशन इत्यादिमें प्रायः ११० लग जाते हैं और इनपर तुम अपना अधिकार चाहते हो! फिर हमें जो स्वतंत्रता मिली, वह कुल २० करोड़के लिए। अगर हमने कोई भी टैक्स घटाना चाहा तो वाइसराय झट कूद पड़ा और हमें रोक दिया। ऐसे स्वराजसे क्या लाभ? तुम हिसाब करके देख लो कि क्या हमें देते हो और क्या अपने हाथमें रखते हो?

बेंथल—फौजका खर्च बेशक बहुत ज्यादा है। मैं उसके घटानेके पक्षमें हूं।

मैं—शायद तुम यह मंजूर करोगे कि इस फौजके खर्चका कुछ हिस्सा इंग्लैंडसे मिलना चाहिए।

बेंथल—मैं मंजूर करता हूं।

रेलवे-विभागके संबंधमें उसने कहा कि उसे व्यापारकी तरह चलाया जाय, भारत-सरकारको केवल अंतिम निर्णय करनेका अधिकार रहे। रिजर्व बैंकके बारेमें पूछा कि तुम क्या इसे पसंद करते हो कि वह राजनैतिक दलबंदीके प्रभावमें रहे?

मैंने कहा कि "मैं सरकारके लिए पूरी स्वतंत्रता चाहता हूं। जिस तरह यहांकी सरकारने गोल्ड स्टैंडर्ड जब चाहा छोड़ दिया उसी तरह हमारी सरकारको भी यह अधिकार होना चाहिए कि देशके लिए जो उचित समझे करे।"

बेंथल—ठीक है, पर वाइसरायकी मंजूरीसे करे।

मैं—मेरी राय है कि वाइसरायकी मंजूरीका यह अर्थ न हो कि वह बात-बातमें दखल दिया करे। पर इस विषयमें भी गांधीजी ही प्रामाणिक रूपसे कुछ कह सकते हैं।

बेंथल—इस मामले में तीन भागीदार हैं—देशी नरेश, सरकार और ब्रिटिश भारत। अगर तीनोंके प्रतिनिधित्वकी व्यवस्था हो जाय, तो सारा प्रश्न हल हो चले।

मैं—सरकारके प्रतिनिधित्वका क्या अर्थ?

बेंथल—जबतक पूरे अधिकार नहीं मिल जाते तबतक कुछ ऐसी व्यवस्था आवश्यक है।

मैं—पर कौन कह सकता है कि जो व्यवस्था थोड़े समयके लिए की जायगी वह स्थायी न हो चलेगी? खैर, इन बातोंपर आगे विचार होनेका क्या रास्ता है?

बेंथल—फुरसत हो तो मंगलवारको गांधीजी, तुम, मैं, कार और कैटो मिलकर पहले व्यापार-संबंधी अधिकारोंके विषयमें कुछ निर्णय कर लें। उसके बाद आर्थिक संरक्षणोंके विषयमें ब्लैकेट, स्ट्राकोश इत्यादि मिलकर बातें कर लेंगे।

बीस

६ अक्तूबर, '३१
लंदन

आज शामको इंडिया आफिसमें सर हेनरी स्ट्राकोशके साथ 'दंगल' हुआ। सभापतिका आसन पहले तो भारत-सचिव सर सैमुयल होरने ग्रहण किया, पर मंत्रिमंडलकी मीटिंग थी, इसलिए सर रेजिनाल्ड मैंटको अपना पद देकर वह कुछ ही मिनिट बाद चलता बना। और बहुत-से लोग उपस्थित थे—गांधीजी, सर पुरुषोत्तमदास, मि० जिन्ना, सर मानिकजी, सर फीरोजशाह सेठना, के० टी० शाह, प्रो० जोशी, रंगास्वामी अय्यंगर, इत्यादि, इत्यादि। गांधीजी प्रायः ७ बजे कार्यवश उठकर चले गये। ५॥ बजेसे कार्रवाई आरंभ हुई। सरकारकी ओरसे सर हेनरी स्ट्राकोशने वक्ताका काम किया और अपनी ओरसे मैंने। ब्लैकेट भी मौजूद था, पर कुछ बोला नहीं।

स्ट्राकोशने पहले तो संसारकी परिस्थितिका दिग्दर्शन कराया, फिर भारतवर्षकी बातें करने लगा। उसकी सबसे बड़ी दलील यही थी कि अगर एक्सचेंज १-६ स्टर्लिंग पर न बांध दिया गया होता तो न जाने लुढ़कते-लुढ़कते कहां जाकर दम लेता और न जाने सरकारको कहांतक नोट छपाकर अपना काम चलाना पड़ता। मैंने जब पूछा कि आखिर ठहरानेके लिए तुम्हारे पास साधन क्या है, तब उससे कोई उत्तर न बन पड़ा। उसने अधिकांश समय मेरी उन दलीलोंका जवाब देनेमें लगाया जो मैंने आर्थिक सुधार (मॉनीटरी रिफार्म) नामकी पुस्तिकामें पेश की हैं। मैंने कहा कि मैं बात-बातपर बहस करनेको तैयार हूं, पर मैं यह कह देना आवश्यक समझता हूं कि उस पुस्तिकामें मैंने जो मत प्रकट किया है, वह मेरा अपना है, भारतीय व्यापारी-वर्गका नहीं। यहां जो लोग आये हैं, वे भारत-सरकारकी नीतिके विषयमें कुछ कहने-

सुनने आये हैं, इसलिए उस विषयको छोड़कर मेरी पुस्तिकाकी समालोचनामें समय लगाना इनके साथ अन्याय करना है। फिर भी स्ट्राकोशने अपना विचार न बदला। खैर, अच्छी बहस हुई। मैंने लिखा था कि एक्सचेंजकी दर उठानेका वास्तविक उद्देश्य अंग्रेज सिविलियन और व्यवसायीको लाभ पहुंचाना था। यह बात इन लोगोंको खूब चुभी और स्ट्राकोश कहने लगा कि इसे किस तरह प्रमाणित कर सकते हो ? सर पुरुषोत्तमदासने कहा कि यह किस्सा तो लंबा-चौड़ा है, और इसे सुनने-सुनानेके लिए समय चाहिए।

खाने-पीनेका वक्त हो रहा था, लोगोंको अपने-अपने कामसे जाना था, इसलिए चर्चा स्थगित की गई। मुझे ऐसा जान पड़ा कि स्ट्राकोश अपने विषयका पूरा पंडित है, पर बेईमान नहीं है, इसलिए संभव है, या तो फिर इसकी चर्चा ही न हो या ब्लैकेट जैसे आदमीको सरकारी पक्षके समर्थनका काम सौंपा जाय। स्ट्राकोश अच्छी तरह जानता है कि सरकारकी ओरसे पेश करने लायक कोई जोरदार दलील नहीं है। वह करे तो क्या ? बोला कि तुमने बार-बार कहा है कि हमारा सोना उड़ा दिया। वास्तवमें सरकारने उड़ाया नहीं, हिंदुस्तानकी जो जिम्मेदारी थी उसे पूरा किया। मैंने पूछा, इंग्लैंडकी भी तो जिम्मेदारी थी—यहां क्या किया ? उसने कहा—मगर इंग्लैंड हिंदुस्तान-जैसा दूसरोंका देनदार नहीं है। मैंने उत्तर दिया—मैं इसे मानता हूं, पर दो बातें हैं। इंग्लैंड वैसे देनदार न हो, पर यहां एक्सपोर्टसे इंपोर्ट ज्यादा है। हमारा देश देनदार है, पर वह इंपोर्टसे एक्सपोर्ट ज्यादा करता है। यह तुम्हें न भूलना चाहिए। साथ ही, यह भी ध्यानमें रखनेकी बात है कि हम अपने उद्योग-धंधोंकी उन्नति कर, अपनी उत्पादन-शक्ति बढ़ाकर ही अपना देना चुका सकते हैं। फिर हमारी नीति कौन-सी होनी चाहिए—उद्योग-धंधोंको बढ़ानेवाली या उनका सत्यानाश करनेवाली ? स्ट्राकोश फिर निरुत्तर रह गया।

इक्कीस

७ अक्तूबर, '३१
लंदन

आर० टी० सी० में अबतक क्या हुआ है, ऐसा पूछा जाय तो यही कहना होगा कि कुछ भी नहीं। अल्पसंख्यक जातियोंका झगड़ा अभी निबटना बाकी है। स्वराज-विधानके संबंधमें एक चावलभर भी प्रगति अबतक नहीं हो पाई है, तो भी यह कहा जा सकता है कि धीरे-धीरे हम आगे बढ़ रहे हैं। गांधीजीकी मैत्री फैलती जा रही हैं, लोगोंसे बातें होती रहती हैं और हमारे कार्यको कुछ-न-कुछ नया स्वरूप रोज मिलता रहता है। अल्प-संख्यक जातियोंके समझौतेकी कहानी दूसरे अध्यायमें मिलेगी।

आज गांधीजी, सर पुरुषोत्तमदास, बेंथल, कार और मैं, पांचों बैठे और मशविरा शुरू कर दिया। संख्याके हिसाबसे शकुन ठीक हुआ, क्योंकि पंच पांच ही होते हैं, हम भी पांच थे। तीन बातें लोगोंने आपसमें तय कीं——

(१) स्वराजमें अंग्रेजोंके प्रति किसी प्रकारका भेद-भाव न हो।

(२) जातीय भेद-भावका खयाल किये बिना स्वराज-सरकार भारतीय उद्योग-धंधोंको संरक्षण दे। ऐसे संरक्षणमें ध्येय अमुक दूकान या व्यवसायको संरक्षित करना ही होगा, न कि काले-गोरेका भेद करना।

(३) आजकी सरकारसे किसी व्यवसायीने बेईमानीसे कोई स्वत्व प्राप्त कर लिये होंगे तो उनकी जांच-पड़तालका हक स्वराज-सरकारको होगा।

वार्तालापके अंतमें तय हुआ है कि यह सिलसिला आगे

चलेगा और इन्हीं लोगों द्वारा ब्लैकेट, स्ट्राकोश इत्यादिसे आर्थिक विधानके संबंधमें समझौता होगा जिसे, आशा की जाती है, यहांकी सरकार भी स्वीकार कर लेगी।

बाईस

८ अक्तूबर, '३१

लंदन

आज सुबह गांधीजी सैंकी और हर्बर्ट सैमुयलसे मिले। बातों-का सारांश इतना ही है कि अभी उन्होंने लंबी आशा नहीं दी है। सैंकीने कहा कि तुम्हें खाली हाथ न जाने देंगे, किंतु सैंकी मिठ-बोला भी है। गांधीजी कहने लगे कि होर यदि ऐसी आशा दिलाये तो उसकी ज्यादा कीमत की जानी चाहिए। किंतु उसने ऐसी आशा नहीं दिलाई है।

मैंने गांधीजीसे आज साफ ही पूछा कि आपको क्या आशा है? कहने लगे कि खाली हाथ जाना होगा। मैंने कहा, पर संभव है कि इतना मिल जाय, जिससे आपको लड़ना न पड़े। कहने लगे, हां—ऐसा संभव है और उसीका प्रयत्न कर रहा हूं। होरने कहा है कि हमें तो कई दिनों तक आपसे बातोंका सिलसिला रखना होगा। यह स्पष्ट है कि अब आर० टी० सी० का महत्व नहीं है। जो काम होना है वह भीतर-ही-भीतर होगा। इर्विनने लिख दिया है कि मुझसे मिले बिना हर्गिज न तोड़ना। इन्होंने भी लिख दिया है, 'तथास्तु'।

यहांके कोई फौजी अफसर गदरके जमानेमें लूटपाट करके हिंदुस्तानसे कुछ जवाहरात ले आये थे। ज्यादा कीमती नहीं, पर कुछ मूल्यवान तो था ही। पीढ़ी-दर-पीढ़ी वह चीज उनके वंशमें चली आती थी। अब गांधीजी यहां आये तो उनकी ख्याति सुनकर उस वंशके लोगोंको लगा कि गांधीजीके देशका हरामका माल रखनेसे तो हमारा नाश हो सकता है। आज उनके कुटुंबकी

स्त्रियां आईं और वह हार जो पुखराजका था गांधीजीके चरणोंमें रखकर कहने लगीं—हमारे पुरखे लूटकर भारतसे यह लाये थे, बहुत दिन रखा, अब आपके तपका बखान सुना तो रखनेकी हिम्मत नहीं होती। गांधीजीने हारको स्वीकार कर लिया। तपका ही यह चमत्कार है, वर्ना भेड़ियेके मुंहमें गया ग्रास वापस नहीं आता।

तेईस

९ अक्तूबर '३१
लंदन

अल्पसंख्यक-दल-कमेटीकी कहानी सारी-की-सारी दुःखद है। एक सप्ताह तक यह नाटक चला और अंतमें जहां-के-तहां! वही सीटोंका झगड़ा, वही अविश्वास! अंतमें छठे दिन किसीने प्रस्ताव किया कि कुछ पंच हों, उन्हें मामला सौंप दिया जाय। गांधीजीने पूछा, मुंजे! तुम्हारी क्या राय है? उत्तर मिला, मुसलमानोंसे पूछिए। मुसलमानोंसे पूछा तो कहने लगे कि सलाह करके बतायेंगे। रातको १० बजे फिर सभा बैठी। मुसलमानोंने कहा कि हमें मंजूर है, तो डा० मुंजेने भी कहा कि मंजूर है—किंतु सवाल उठा कि पंच कौन हो? डा० मुंजे बोले कि पंच कोई बाहरका आदमी हो। मुसलमानोंने कहा, नहीं—मेंबरोंमेंसे कोई हो।

इस सारे नाटकको देखकर मुझे तो दुःख होता था। दोनों दलोंमें परस्परके अविश्वासके अलावा और भी बात आगई है। नतीजा यह हुआ है कि गांधीजीका बोझ बढ़ता जाता है। दिन-रात काम करते हैं, ३ घंटेसे ज्यादा सोनेको नहीं मिलता। इनके बलपर ही यहां थोड़ी पूछ है, जिसपर तुर्रा यह कि हर तरहसे हमारे ही लोग इन्हें तंग करते रहते हैं। मुसलमान करें तो हम ला-इलाज हैं, किंतु हिंदू भी करते हैं। जिनसे आशा थी उन्होंने भी सहायता नहीं की। मैंने गांधीजीसे स्पष्ट कहा कि

आपको करना है सो करें। कहने लगे—"सो तो करूंगा ही, किंतु मुसलमान भी तो कहां मेरा साथ देनेवाले हैं! और साथ देनेका जबतक वादा न करें तबतक मैं आत्म-समर्पण करके क्या करूं?" आज आखिर भरी सभामें गांधीजीने कह दिया कि मैं तो हार गया, किंतु हारका यह भी कारण है कि यह सम्मेलन असल पंचोंका नहीं है, इसमें नकली पंच हैं। बस इतना कहा, मानो मधुमक्खियों-के छत्तेको छेड़ दिया। शफी आपेसे बाहर। अंबेडकरने तो जहर ही उगल डाला। कहने लगा, "महात्माको तो झूठा दावा करनेकी आदत है। छः करोड़ अछूत तो मुझे ही मानते हैं, इनको कोई पूछता भी नहीं।" प्रधान मंत्रीने भी गांधीजीको खोटी-खरी सुनाई। मेरे बदनमें तो आग-सी लग गई। गांधीजी कहने लगे, शांत हो, हमारा रास्ता ठीक है; दूसरे क्या कहते हैं, इसकी क्या चिंता है।

चौबीस

२१ अक्तूबर, '३१
लंदन

इस सप्ताहका हाल तो अत्यंत निराशा-जनक है। गत आर० टी० सी० में कुछ तो आशा थी, पर इस बार तो सबके मुंह फीके हैं। माया-जाल तो अंगरेजोंने ही बिछाया था, किंतु उसमें हमारे अच्छे-अच्छे लड़वैये फंस गये हैं। गांधीजी छटपटाते हैं, किंतु कोई असर नहीं हो रहा है। शायद गांधीजी कुछ उग्रता करें तो कुछ नया सिलसिला निकल आये। अभी गांधीजी भी **'सब धान बाईस पसेरी'** हो गये हैं। वही आदर है, वही सत्कार है। किंतु **"देबा लेबा नै तो भाया राम जी को नाम"** स्वराजका जो नकशा खींचा गया था, वह भानमतीका पिटारा था। राजा शामिल हों, अंगरेज भीतर हों, हिंदू-मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, मजदूर, व्यापारी, ऐंग्लो-इंडियन, अछूत सबको

अलग-अलग हक मिलें, सबकी संमति हो, तब विधान बने। जाति-पांतिकी कई कतर-ब्योंतें की गईं और अब हमसे कहते हैं, पहले आपसमें समझौता करो। दुनियामें जो कहीं न हुआ, उसकी हमसे आशा की जाती है !

क्या इंग्लिस्तानमें ऐक्य है ? कुछ भी हो, हमारे लिए तो हिंदू-मुस्लिम-ऐक्य जरूरी है। इस समय सारा-का-सारा झगड़ा पंजाबका है। जब कभी कोई समझौतेकी आशा होती है, तब सरकारी दूत दौड़ने लगते हैं। हिंदुस्तानसे खास अंगरेज आकर बैठे हैं, जो हिंदूको समझाते हैं 'तुम लुट रहे हो'; मुसलमानको समझाते हैं 'तुम मरे जा रहे हो, और सिक्खको अलग डराते हैं। मुसलमान कहते हैं, पंजाबमें हमारा बहुमत है, वह हमें मिले हिंदू कहते हैं, कानूनन बहुमतका सिद्धांत अन्यायमूलक है, ऐसे तुम्हारा बहुमत हो तो हम खुशीसे स्वीकार करें। तब एक नई स्कीम निकली। पंजाबमेंसे अंबाला, जिसमें अधिक हिंदू हैं, निकाल लिया जाय। इसका नतीजा यह होता है कि पंजाबमें मुस्लिम-बहुमत ६३ फीसदी बन जाता है और फिर मुसलमान पृथक् निर्वाचन या सुरक्षित सीटोंकी जिद्द नहीं करते। सिद्धांतरूपसे हिंदू विरोध नहीं कर सकते, किंतु जहां इस स्कीमकी चर्चा चली, कुछ नेता कहने लगे, "राम-राम ! यह तो और भी बुरा !!"

पंचायतकी बात चली। गांधीजीने खूब जोर लगाया कि "पंडितजी, आप पंचायत मान लें। यद्यपि मुसलमान राजी नहीं हैं तो भी लोगोंपर जो बुरा असर पड़ा है, कम-से-कम वह तो रफा हो जायगा।" पर पंडितजी पंचायतके लिए तैयार नहीं। यहां लोगोंपर बुरा असर पड़ा है। उन्हें कहनेका मौका मिल गया है कि जब तुम्हारा मेल ही नहीं तब हम क्या करें ? स्वराजकी लुटिया तो डूब चुकी, ऐसा अभी मालूम होता है। लोग जहाजमें स्थान खरीदने लग गये हैं। जहां जीवन-मरणका प्रश्न है वहां ऐसी लड़ाई अत्यंत घृणास्पद मालूम होती है। पंडितजीका चेहरा भी उतर गया है और उनके क्लेशका कोई ठिकाना नहीं।

इस सप्ताह पंडितजी, गांधीजी, जिन्ना और सप्रूके बीच मैंने काफी दौड़-धूप की और अब थक गया हूं। मुसलमानोंको न हमारा विश्वास है, न सीधी बातें हैं, न तय होनेपर ही पूरा साथ देनेको तैयार हैं। किंतु उनकी चर्चा फिजूल है। गांधीजी 'आत्म-समर्पण' कर देना चाहते हैं, बशर्ते कि मुसलमान उनका राष्ट्रीय मांगोंमें साथ दें। पर राष्ट्रीय मांगोंमें साथ देनेकी उनकी हिम्मत कहां !

धीरे-धीरे अब राजा भी खिसकने लगे हैं। भानमतीके पिटारेमें कई सांप बंद थे। वे निकल-निकल भागते हैं। महाराजा बीकानेर कहते हैं, हम साथ हैं, किंतु— बस 'किंतु' पर अड़ जाते हैं। अछूतों और दूसरे लोगोंको तो अभी चिल्लानेका अवसर ही नहीं मिला है। हमारी इस सप्ताह में खूब हँसी हुई है। ऐसी निराशाके भंवरमें गांधीजी प्रसन्न-मुख हैं। कहने लगे, शर्मिंदा बनके नहीं जायंगे, चिंता मत करो। गांधीजी भीतर-ही-भीतर मिलते रहते हैं और एक तरह से मैत्री बढ़ रही है। इस मैत्रीका शीघ्र कोई फल होनेवाला नहीं है। जवाहरलालजीके बहादुरीके खत आते रहते हैं।

कई चित्रकार, कई शिल्पकार बैठे गांधीजीके चित्र और मूर्तियां बना रहे हैं। गांधीजी बच्चोंसे खेलते रहते हैं। वही रंग, वही ढंग। न कभी यहांसे उन्हें आशा थी, न अब निराशा है। जिन्हें आशा थी, उनके ही चेहरे सूखे हैं।

बेंथलसे आज रातको फिर बातें चलेंगी। सिलसिला जारी है। इंडिया आफिसमें एक्सचेंजका दंगल फिर परसों होगा।

पच्चीस

१६ अक्तूबर, '३१
लंदन

हिंदू-मुसलमान-समस्याका ताजा हाल अब यह है कि मि०

जयकर और डा० मुंजे दोनों ही कुछ ठंडे हो रहे हैं। सिक्ख नहीं मानते, पंडितजी कुछ दृढ़तापूर्वक नहीं कहते। कार्बेटकी स्कीम है कि अंबाला डिवीजन पंजाबसे निकाल लिया जाय, जिसका परिणाम होता है कि पंजाबमें हिंदू प्रति सैकड़े प्राय: २२, सिक्ख १४, मुसलमान ६३ रह जाते हैं। मुसलमान शायद इस स्कीमको संयुक्त चुनावके साथ और बिना अलग 'कुर्सी' रखवाये मान लें। पर झगड़ा वैसे-का-वैसा ही है। महात्माजीको यह स्कीम पसंद आई है और शायद इसीका सिलसिला अब चलेगा। आज रातको और दोपहरको भी मुसलमानोंसे महात्माजी बातें करेंगे।

नरेशोंका हाल भी बुरा है। संशयसे भरे पड़े हैं। उनसे भी अलग बातें होंगी।

होरसे फिर महात्माजी कल मिले। जितना ज्यादा मिलते हैं, उतना ही उससे प्रेम बढ़ता जा रहा है, हालांकि दोनों उत्तर-दक्षिण हैं। परसों होरने भरी सभामें कह दिया कि फौज हम हर्गिज नहीं देंगे। उसपर महात्माजीने कहा, 'शाबाश! स्पष्ट-वक्ता हो तो ऐसा हो।' कल होरने पूछा, 'मैंने आपको नाराज तो नहीं किया ?' महात्माजीने कहा, 'नाराज नहीं, तुमने मुझे राजी किया; क्योंकि मुझे पता लग गया कि तुम ईमानदार हो, लल्लो-चप्पो नहीं करते। किंतु मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे अब यहां क्यों बैठा रखा है ? मुझे भेज दो।'' होरने कहा है कि "इतनी जल्दी न करें, मैं अगले सप्ताहमें स्पष्ट कर दूंगा कि हम कहांतक जानेको तैयार हैं। आपने तो कोई बात छिपा नहीं रखी। मैं भी कोई बात छिपाके नहीं रखूंगा।"

महात्माजी कहते थे कि यह आदमी तो सोना है और इसीसे मेरा काम बनेगा। सप्रू वगैरह तो सिर कूटते हैं कि यह राक्षस कहांसे आ गया! उनकी दृष्टिमें बेन अच्छा था, इनके लिए होर अच्छा है। मुझे मालूम होता है, इतनी जल्दी महात्माजीको नहीं भेजेंगे, किंतु महात्माजी जो चाहते हैं सो नहीं मिलेगा।

मेरा तो अभी भी वही खयाल है कि दस आने मिलेंगे, छः आनेके लिए युद्ध होगा।

छब्बीस

२२ अक्तूबर, '३१
लंदन

आर० टी० सी० के कार्यमें तो कोई उन्नति नहीं हुई है। दिन-दिन स्पष्ट होता जाता है कि कुछ होनेका नहीं। हिंदू-मुस्लिम-वैमनस्य बना हुआ है और इसको यहां काफी तूल दे दिया गया है। प्रायः यही कहा जाता है कि जब तुम आपसमें ही समझौता नहीं कर सकते, तो हम क्या करें। महात्माजीको कितने ही लोग उलाहना देते हैं कि आप समझौता क्यों न कर लें, किंतु महात्माजी न तो मुसलमानोंकी नीयत साफ देखते हैं, न हिंदू-सभाका उत्साह पाते हैं। इसलिए कुछ अवहेलना-सी कर रहे हैं। मुसलमान इनकी राष्ट्रीय मांगोंको स्वीकार कर लें और अन्य छोटी-छोटी दलबंदियोंका साथ न दें तो समझौता कर लें—या तो हिंदू-सभावाले कारबेटकी या अन्य किसी स्वीकार करने लायक स्कीमका समर्थन करें तो समझौता हो।

बेंथलसे भी कोई नई बात नहीं हुई। जो पहले हो चुकी, उसीका पिष्टपेषण जारी है। वह भी समझता है कि हम कमजोर हैं, इसलिए प्रगति धीमी है।

होरसे महात्माजीकी फिर बातें हुईं, किंतु अबतक कोई नतीजा नहीं निकला। होरने वादा किया है कि अगले हफ्ते स्पष्ट बतायेगा कि सरकार कहांतक जा सकती है? महात्माजी कुछ अधीर और उतावले-से होने लगे हैं, क्योंकि उनको समयकी बरबादी अखरती है। इर्विनने कहा था कि कोई भी महत्वपूर्ण कदम रखनेसे पहले पूछ लेना। कल इर्विनसे मिलकर महात्माजी ने कहदिया किअब मैंयहांसे भागनेवाला हूं और एक-दो दिनमें ही

गोली चला दूंगा। इर्विनने कहा, "ऐसा नहीं हो सकता। अभी तो पावभर 'पूणी' भी नहीं कती।" इसके माने यह भी हो सकते हैं कि कुछ आशा है। चुनावकी धूमके मारे यहां लोग व्यस्त हैं। इनकी क्या स्थिति रहेगी, सो भी इन्हें पता नहीं। इसलिए २७ को अपना तलपट बांधकर बातें करेंगे। इस समय तो चाल यह है कि कान्फ्रेंस को तो बर्खास्त करें और एक नया कमीशन हिंदुस्तान भेज दें। अकबरने कहा था कि "**खींचो न कमानों को न तलवार निकालो, जब तोप मुकाबिल हो तब अखबार निकालो।**" अंगरेजोंका यह हाल है कि '**गर सामान बगलें झांकनेका है तो कमीशन बैठा दो।**' बस यही चाल है, मगर महात्माजी माननेवाले नहीं हैं। होर समझानेकी कोशिश करता है, पर महात्माजी सिर हिलाते हैं।

मेरा ऐसा खयाल है कि यह नहीं मानेंगे तो वे कुछ आगे बढ़ेंगे, पर अधिक आशा नहीं है। महात्माजी स्वयं समझौतेके पक्षमें हैं, पर समझौता हो तो किससे ? कल कहते थे कि शायद हिंदुस्तान पहुंचते-पहुंचते लड़ाई छिड़ जाय। मुझे ऐसा मालूम होता है कि ऐन मौकेपर कोई घटना घट जायगी—हालांकि अभी तो कोई अच्छी सूरत नजर नहीं आती।

साथ ही यह जान लेना चाहिए कि यहां आनेसे हमें काफी लाभ हुआ है। महात्माजीकी मैत्री तो दूबकी तरह फैलती है। शहरके सेठोंसे कल सुना कि लोगोंपर प्रभाव पड़ा है। कहते हैं, गांधी आदमी तो अच्छा है। परसों यहांकी ठाकुरों और सेठोंकी सम्मिलित सभामें गांधीजीको बुलाया था। सारी राणखंमाण मौजूद थी। उनका असर अच्छा हुआ। बीज बोया गया है। और फिर लड़ाई छिड़ी तो यहां के बहुत लोग सहानुभूति जतानेवाले होंगे।

चित्र उतारनेवाले, मूर्ति गढ़नेवाले, हस्ताक्षर करानेवाले और वक्तव्य लेनेवाले गांधीजीके पास उसी रफ्तारसे आ रहे हैं। मुलाकातोंका तांता भी जारी है। वही धूमधाम है। खाली 'स्वराज' नहीं मिला है।

यहां सर्दी ४५ डिगरी तक पहुंची है। अभी तो नवंबर आना बाकी है।

गांधीजीको काम इतना रहता है कि रातको १ बजे सोते हैं—४ बजे उठ जाते हैं। एक दिन कहते थे, पता नहीं किस दिन बीमार पड़ जाऊं। सोनेको समय मिले तो फिर कोई चिंता नहीं। कपड़े उतने ही चलते हैं। कंबल बढ़ानेको कहा तो कहते हैं, निभ जाती है। पंडितजीको तो जाड़ा ज्यादा सता रहा है। कपड़े भी यहां नये खरीदे हैं। स्वास्थ्य उनका अच्छा नहीं है। मानसिक पीड़ा भी तो है। इस समय उनकी यह स्थिति है कि न गांधीजीको छोड़ना चाहते हैं, न मुंजे और नरेंद्रनाथको ही।

सत्ताईस

२३ अक्तूबर, '३१
लंदन

कल कुछ विशिष्ट लोगोंसे बातचीत हुई। कहते थे कि गांधीजीका प्रभाव अच्छा पड़ा है। इनकी सलाह थी कि यहांके सेठोंको हम समझा सकें तो काम बहुत-कुछ आगे बढ़ सके। ऐसे कुछ सेठोंसे मिलनेका प्रबंध कर रहा हूं। कल सर पुरुषोत्तमदास-की लेटनसे बातचीत हुई थी। यह 'इकनामिस्ट' (अथशास्त्री) नामक पत्रका संपादक है और 'साइमन कमीशन' का आर्थिक विषयोंमें सलाहकार बनकर हिंदुस्तान गया था। उसने कहा कि हिंदू-मुस्लिम-झगड़ेको एक पंचायतके हवाले कर देंगे।

अट्ठाईस

२९ अक्तूबर, '३१
लंदन

राजनैतिक परिस्थिति ज्यों-की-त्यों है। कोई खास बात नहीं हुई है। पर हम लोग बिल्कुल निराश नहीं हुए हैं। इसमें

संदेह नहीं कि कंजर्वेटिव पार्टीको चुनावमें आशातीत सफलता प्राप्त हुई है—इस तूफाने-बदतमीजीमें मजदूर-दल तो उड़ गया— यह समझना चाहिए। पर सरकार भी सुखकी नींद नहीं सो सकती। इस समय पार्लमेंटमें उसका विरोध नाममात्रको रह गया है। यह उसके लिए उतनी खुशीकी बात नहीं है। विरोधी साथ भले ही न दें, पर उनसे उपकार तो होता ही है। समालोचना सीधी राहपर रखनेका एक साधन है। सरकारके जबर्दस्त विरोधी हों तो वह भयंकर भूलोंसे बहुत-कुछ बच सकती है। इस समय यह बात नहीं है, इससे सरकारको भी चिंता होने लगी है।

कुछ लोगोंका खयाल है कि यह ज्यादा समयतक न टिक सकेगी। मेरी अपनी राय दूसरी है। इतना मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि थोड़े ही समयमें यह सरकार अपनी लोकप्रियता से हाथ धो बैठेगी। परिस्थिति इतनी खराब है कि उसे सुधारना कोई आसान काम नहीं। यह भी याद रखनेकी बात है कि मजदूर-दलवाले हार जानेपर भी एक तिहाई—करीब ७,०००,०००—वोट पा चुके हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि मजदूर-दलके साम्य-वादका समर्थन करनेवाले इस मुल्कमें ७० लाख आदमी मौजूद हैं। ये लोग चुप रहनेके नहीं। रोटी-दालवालोंको इसकी गहरी चिंता है और मेरा खयाल है कि सरकार हर काममें फूंक-फूंककर कदम रखेगी और जहांतक संभव होगा सबको संतुष्ट करनेकी चेष्टा करेगी।

हिंदुस्तानके बारेमें उनकी यह नीयत जरूर है कि जहांतक हो सके, कम दिया जाय—पर कान्फ्रेंस टूट जाय, यह उनकी इच्छा नहीं जान पड़ती। फौजको अपनी मुट्ठीमें रखना चाहते हैं। आर्थिक मामलोंमें भी कुछ अधिकार चाहते हैं। गांधीजी यह चेष्टा कर रहे हैं कि हम लोगोंकी एक राय हो जाय। हिंदू-मुसल-मानोंके बीच समझौता करानेके प्रयत्नमें वह निरंतर हैं ही, सप्रू और दूसरोंके बीच राजनैतिक एकता करानेकी भी कोशिश कर

गांधीजी सर आग़ाख़ाँ के साथ

गांधीजी दर्शकों के बीच

रहे हैं। समझौतेके लिए वह कांग्रेसकी मांगसे कम लेनेको भी तैयार हैं—बशर्तेकि कांग्रेस की कार्यकारिणीको यह मंजूर हो। उन्हें सफलता होगी या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। इतनी सफलता उन्हें जरूर हुई है कि सब लोग उन्हें समझदार मानने लगे हैं।

बेंथलसे जो बातचीत चली थी, वह बीचमें रुक गई थी। शायद उन लोगोंने हमारी कठिनाइयोंको देखकर उनसे फायदा उठाना चाहा था। पर उसका सिलसिला फिर शुरू होनेवाला है। कल रातको बेंथलसे मेरी बातचीत हुई। उसने कहा कि हम लोग सचमुच समझौता कर लेना चाहते हैं। बस इस तरह कुछ-न-कुछ काम रोज हो रहा है। इंडिया आफिसवालोंको और यहांके सेठोंको समझाने-बुझानेकी कोशिशमें हम लोग लगे हुए हैं। कामको आपसमें बांट लिया है। सर पुरुषोत्तमदासके साथ मैं तो आर्थिक विषयोंकी विवेचनामें लगा हुआ हूं। बेंथल मुझसे कह रहा था कि जबतक हम लोगोंका किशके साथ कुछ समझौता नहीं हो जाता तबतक कुछ होने-जानेका नहीं। किश इंडिया आफिसमें अर्थ-विभागका मंत्री है। बेंथलकी बातचीतसे तो जान पड़ा कि वह हम लोगोंके सहयोगका बड़ा इच्छुक है। बात दरअसल यह है कि इन लोगोंको भय है कि बिना हम लोगोंके सहयोगके एक्सचेंज और करेंसीके पांव मजबूतीसे जम नहीं सकते। मैंने उससे कहा कि सहयोग देनेके लिए मैं हर घड़ी तैयार हूं। अगले सप्ताहमें यहांके अर्थशास्त्रियों और इंडिया आफिसवालोंसे बहुत-कुछ बातचीत होनेका रंग दीखता है।

अगर कान्फ्रेंस टूटी नहीं तो नवंबरके अंततक काम रहेगा। बाहरसे तो यही जान पड़ता है कि हम लोग आगे नहीं बढ़े हैं, पर भीतर-ही-भीतर कुछ-न-कुछ प्रगति होती जा रही है और काम—धीरे-धीरे ही सही—बनता जा रहा है। अगर कान्फ्रेंस टूट भी गई तो इतना तो लाभ जरूर होगा कि इस बार हम लोग जो मंजिल तय कर लेंगे, उसे फिर तय करना न पड़ेगा।

गांधीजी आजकल २४ में ३ घंटेसे ज्यादा नहीं सोते। काम-पर-काम आता ही जाता है। कहते थे कि मैं रोज कम-से-कम ८ घंटे सोना चाहता हूं, पर तीनसे ज्यादा नहीं मिलता। आर० टी० सी० की कमेटीकी मीटिंगमें बैठे-बैठे झपकी लेते हैं। सप्ताहके अंतमें लंदनसे कहीं बाहर चले जाते हैं। कभी किसी पादरीके यहां, कभी किसी भावुक या ईश्वर-भक्तके यहां ठहर जाते हैं। चित्र लेनेवालों और मूर्ति बनानेवालोंकी संख्या घट चली है, क्योंकि बहुतोंकी तृप्ति हो चुकी। अभीतक गांधीजीने कपड़ा-लत्ता उतना ही रखा है। फिर भी वह यहांकी सर्दी बर्दाश्त कर लेते हैं, यह आश्चर्यकी बात है।

उनतीस

३० अक्तूबर, '३१

लंदन

कल इंडिया आफिसमें एक्सचेंजके संबंधमें फिर कांफ्रेंस बैठी। ब्लैकेट और स्ट्राकोश दोनों ही मौजूद थे। अपनी ओरसे सर पुरुषोत्तमदास, गांधीजी, अध्यापक शाह, जोशी और मैं था। छोटी सभा होनेके कारण इसे विशेष सफलता प्राप्त हुई। लोगोंने दिल खोलकर बातें कीं। स्ट्राकोशने वही पुराना राग अलापना शुरू किया, पर ब्लैकेटने बड़ी खूबीसे उसे निरुत्तर-सा कर दिया। हम लोगोंको इसपर आश्चर्य हुआ और संतोष भी। ब्लैकेटने कहा कि हिंदुस्तानके लिए इस समय चीजोंका दाम बढ़ना बहुत हितकर है और मैं चाहता हूं कि वहां दाम फीसदी ४० तक बढ़ चले। हां, वह यह न बता सका कि दाम कैसे बढ़ाया जाय। मैंने कहा कि रुपयेको फिलहाल अपनी राह जाने दो और जब रिजर्वमें काफी सोना इकट्ठा हो जाय, तब १ शिलिंगपर इसे बांध दो। वह इससे सहमत न हो सका।

मैंने गांधीजीसे कहा कि आप अब इनसे एकांतमें बातें करें।

मैंने स्ट्राकोशको भोजनके लिए अगले मंगलवार (३ नवंबर) को निमंत्रित किया है। ब्लैकेटको भी बुलानेवाला हूं। ब्लैकेट 'बैंक आव् इंग्लैंड' का डाइरेक्टर है और वह चाहता है कि इंग्लैंडमें दाम फीसदी ३४ बढ़ जायं। कल बेंथलसे फिर बातें हुईं। उसने कहा कि अर्थ-विभागकी देख-रेखके लिए एक कौंसिल बना दी जाय। हम लोग सहमत नहीं हुए। पर इससे जान पड़ता है कि वह अभीतक सीधी राहपर नहीं आया है।

इंडिया आफिसका शास्त्रार्थ समाप्त होगया। गांधीजीने अपना निर्णय हमारे पक्षमें दे दिया। गांधीजी इस मसलेको छोड़ना नहीं चाहते हैं। होरसे कहनेवाले हैं कि तुम मुझे नहीं समझा सके। या तो मेरा संतोष करो, नहीं तो मैं अपनी राय तुम्हारे खिलाफ दूंगा।

तीस

३ नवंबर, '३१
लंदन

होर विधान-निर्माण-परिषदके काममें ज्यादा दिलचस्पी लेने लगा है। एक सप्ताहमें परिस्थिति बहुत-कुछ स्पष्ट हो जायगी।

गांधीजी इन लोगोंकी अवहेलना कर मुसलमानोंसे समझौता कर लेते; पर उनकी तीन शर्तें हैं:

(१) समझौता कांग्रेसको मंजूर हो।
(२) राष्ट्रवादी मुसलमान और सिक्ख भी उसे मंजूर करें।
(३) मुसलमान उनकी प्रत्येक राष्ट्रीय मांगका समर्थन करनेको तैयार हों।

गांधीजीका यह भी कहना है कि अछूत, यूरोपियन, ऐंग्लोइंडियन और देशी ईसाई—इनको पृथक् निर्वाचनका अधिकार

न दिया जाय। मुसलमान न तो इसका समर्थन करते हैं, न उनकी दूसरी राष्ट्रीय मांगोंका। इसलिए गांधीजी इस प्रश्नकी ओर विशेष ध्यान नहीं दे रहे हैं। वह जानते हैं कि उनकी ताकत क्या है। उन्हें अच्छी तरह मालूम है कि मुसलमानोंको उनसे जितना मिल सकता है, उतना सरकार या पंचायतसे नहीं। उनका विश्वास है कि आज या कल मुसलमानोंको उनके पास जाना ही होगा। सरकारसे तो उन्होंने कह दिया है कि तुम जजोंसे इसका फैसला करा लो---पर मुसलमानोंको यह मंजूर नहीं है। मालूम नहीं, सरकार क्या करेगी।

अपने कुछ हिंदू नेताओंसे मेरी शिकयात यह है कि उन्होंने गांधीजी के हाथोंमें इस मामलेको न छोड़कर इस आक्षेपके लिए गुंजाइश कर दी कि न तो मुलसमान उनका नेतृत्व स्वीकार करते हैं, न हिंदू; फिर महात्माजी प्रतिनिधि हैं तो किनके? मगर हम लोगोंने एकमत हो यह कह दिया होता कि 'गांधीजी जो कुछ करेंगे, हमें स्वीकार होगा तो हिंदू-मुस्लिम-समस्या हल होती या नहीं, यह दूसरी बात है, पर इसमें संदेह नहीं कि इससे हमारी ताकत कहीं बढ़ जाती और हम आज दुनियाकी निगाहमें कहीं ऊंचे होते। इन लोगोंकी दलीलकी तहमें जो भयंकर कमजोरी है, उसे ये देखनेमें असमर्थ हैं।

गांधीजी प्रधान मंत्रीसे मिले। कोई खास नतीजा न निकला। परिस्थिति न तो आशाजनक है, न निराशाजनक।

इकतीस

५ नवंबर, '३१

'लंदन'

इस सप्ताहमें महात्माजीने मैकडानल्ड, होर और बाल्डविन-से बातें कीं। बातोंका नतीजा यह निकला है कि आगामी मंगल और बुधको मंत्रिमंडल भारतके विधानके संबंधमें विचार करके

अपने निर्णयपर पहुंचेगा। बुध या बृहस्पतिको अल्पसंख्यक-दल परिषद् या विधान-निर्माण-परिषद्का आह्वान करेगा और प्रधान मंत्री अपनी राय खुल्लमखुल्ला जाहिर कर देगा। उसके बाद उसे हम चाहे स्वीकार करें या अस्वीकार करें या उसपर बहस करें। हो सकता है कि बहसके बाद उसमें कुछ रद्दोबदल भी हो। पर यह कठिन मालूम होता है। हिंदू-मुस्लिम-समस्या भी किस तरहसे हल हो, इसका निर्णय प्रधान मंत्री दे देगा। इसलिए यह कहा जा सकता है कि आगामी सप्ताहमें हमारा भविष्य नक्की हो जायगा। शायद २०-२५ नवंबर तक हम यहांसे कूच कर जायं। क्या होगा, यह कहना तो आसान नहीं है, किंतु गत कांफ्रेंससे ज्यादा आगे न बढ़ेंगे, यह स्पष्ट मालूम होता है। यह भी चाल है कि प्रांतोंको अभीसे स्वातंत्र्य दे दें और केंद्रके विधानको खटाईमें डाल दें। किंतु हम लोगोंने एकमतसे निर्णय कर लिया है कि इसे कभी स्वीकार नहीं करना। यह चाल मुसलमान और अंग्रेज मिल-कर कर रहे हैं, जिससे भविष्यमें पंजाब बराबर चिल्लाता रहे कि हमें केंद्रीय स्वराज नहीं चाहिए और इस तरह विलंब होता रहे।

महात्माजी साप्ताहिक विश्रामके लिए दो दिन (शनि और रवि) बाहर जाते हैं। अबकी बार पर्य्यटन आक्सफोर्डकी ओर होगा। साथमें प्रधान मंत्रीका लड़का, लार्ड लोथियन, अध्यापक गिलबर्ट मरे आदि प्रतिष्ठित व्यक्ति रहेंगे और दो दिन आपसमें बातें होती रहेंगी।

कल महात्माजीने कुछ स्वयंभू नेताओं से कहा कि "मैंने तो प्रधान मंत्रीसे कह दिया है कि ये लोग तो तुम्हारे मेहमान हैं। यदि ये प्रतिनिधि बननेका दावा करें, तो इन्हें चुनावसे आने दो। देखो, इन्हें कितने वोट मिलते हैं और मुझे कितने वोट मिलते हैं।"

महात्माजीकी इस तरह बातें करनेकी आदत नहीं है। यह घटना प्रकट करती है कि इन लोगोंने उन्हें कैसी ठेस पहुंचाई है। कल मैंने कहा कि यह स्थिति अत्यंत भयंकर है कि सांप्रदायिक

संस्थाएं कांग्रेसकी देवराणी-जेठाणी बननेकी कोशिश करें। स्वराजके लिए लड़ाई तो लड़े कांग्रेस, और यहां आनेपर ऐसे लोग कूद-कूदके कहें कि हिंदुओंके प्रतिनिधि हम हैं, महात्माजी नहीं। फिर तो सहज ही प्रश्न उठता है कि आखिर महात्माजी किसके प्रतिनिधि हैं? इन लोगोंने संग्राममें तो कोई स्वार्थत्याग किया नहीं, अब टांग अड़ानेको और महत्माजीकी तौहीन करनेको यहां भी पहुंच गये। महात्माजीने कहा कि "मेरी दवा तो हिंदूसमाजको प्रिय नहीं, वह समझता भी नहीं कि मेरी दवा क्या है। गुंडेपनकी दवा गुंडापन है, ऐसा ही वह मानता है। ऐसी हालतमें जबतक हिंदू मेरी दवाका मर्म न समझें, हिंदूसभाको अपने कब्जेमें करना मैं मुनासिब नहीं समझता।" मैं तो यह कहूंगा कि हिंदूसभा को चाहिए कि वह हिंदुओंको मजबूत बनाये, रीतिरस्म, अछूतपनमें सुधार करे, शिक्षा-दीक्षाका प्रबंध करे, किंतु राजनीतिमें कांग्रेसकी प्रतिस्पर्धा करना भयंकर मालूम होता है। आखिर कांग्रेसने लुटा क्या दिया? महात्माजीके 'आत्मसमर्पणका' भी तो नतीजा देख लेना चाहिए।

बाल्डविनने तो महात्माजीसे साफ ही कह दिया कि आप जो चाहते हैं सो आपको नहीं मिलेगा। मैंने महात्माजीसे कहा कि यदि आठ आने भी मिलेंगे तो आपके बलपर—इसलिए आप यहांसे हर्गिज न भागें। महात्माजीने कहा—"मैं जानता हूं। भागूंगा नहीं।" उनकी चाल यह है कि कम मिले तो स्वीकार नहीं करना। जितना खेंच सकें, उतना खेंचकर कह देना कि जो कुछ तुम दे रहे हो, वह मुझे तो स्वीकार नहीं है।

काश्मीरके संबंधमें यहां बड़े जोरोंसे मुसलमानोंका पक्ष है। यह ध्यान रहे कि देना इन्हें न हिंदुओंको है, न मुसलमानोंको—किंतु पीठ उनकी ठोंकते हैं और हमसे लड़ाते हैं।

रातको एक भोजमें मुझे निमंत्रण था। एक पुलिस अफसर, जो कभी हिंदुस्तानमें था, बगलमें बैठा था। एक ओर पोलिटिकल

महकमेका एक उच्च सरकारी अफसर बैठा था। दोनों ही अंगरेज थे। पुलिसवालेने कहा कि "हिंदू-मुस्लिम-झगड़ा तो फैलाया हुआ है, मैंने खुद देखा है कि आज भी गांवोंमें यह समस्या नहीं है।" उसने मुझे एक किस्सा सुनाया। सरहदसे तीन दिनके रास्तेपर एक किलेमें इनकी फौज थी। एक बनिया रसद देता था। उसके मर जानेपर इनकी फौजके मुसलमान सिपाहियोंने कहा कि इसे हिंदुस्तान जलानेको भेजना चाहिए। अफसरने कहा कि—तीन दिनका रास्ता है, कहां भेजेंगे ? यहीं गाड़ दो। किंतु मुसलमानोंको यह पसंद न आया। आखिर उन्होंने अपने खर्चसे लकड़ी जुटाई, उसकी अर्थी सजाई और बैंड बजाते स्मशानमें ले गये। अफसर मुझसे कहता था कि कई सिपाही तो रोते थे। उसने मुझसे पूछा—बताओ, हिंदू-मुस्लिम-समस्या कहां है ? मैंने कहा कि क्या बताऊं, तुमने ही तो फैलाई है। बगलके पोलिटिकल महकमेवाले अफसरने एक मुस्लिम नेताकी ओर, जो भोजमें शरीक था, इशारा करके कहा कि काश्मीर की आधी आंधी इस शख्सने उठाई है। बात यह है कि यहां भी करतूत सरकारकी ही है। अफसर जानते हैं, सब लोग जानते हैं—फिर भी हमारे आदमी अंधे हैं।

अछूतोंकी मांगका महात्माजी विरोध करते हैं। कहते हैं कि मैं इनको कैसे अलग कर दूं ?

बत्तीस

६ नवंबर, '३१

लंदन

कल गांधीजी और हम सब लोग सम्राट्के मेहमान थे। सब करीब ४०० थे। कितने लोग तो देशी पोशाकमें थे। मैं तो देशी पोशाक ले ही नहीं आया था, इसलिए "चिमनी" हैट ओढ़कर ही गया था। महलमें बिजलीकी चकाचौंध—और काली

पोशाकवालोंके बीच गांधीजी नंगे पांव और चद्दर ओढ़े ऐसे मालूम होते थे जैसे अमावस्यामें चंद्रमा। सम्राट् और सम्राज्ञी सिंहासन-भवनमें एक तरफ खड़े हो गये और हम लोग अभिवादन करते हुए सामनेसे निकल गये। सब लोग अभिवादन कर चुके, तब सम्राट् और सम्राज्ञीने चुने हुए लोगोंको बुला-बुलाके बातें करना शुरू किया। पहले हैदराबादके मंत्री, फिर मैसूर, फिर बड़ौदेका मंत्री। इसके बाद गांधीजी बुलाये गये। खड़े-खड़े करीब सात मिनिट बातें हुईं।

बातचीतमें प्रधान भाग सम्राट्का ही था। गांधीजी हँसते गये, बोले बहुत कम। सारांश सुननेमें यह आया।

सम्राट्ने कहा कि "मैं आपको अच्छी तरह जानता हूं। जब मैं युवराजकी हैसियतसे दक्षिण अफ्रीका गया था, तब आपने भारतीय प्रजाकी ओरसे मुझे सम्मानपत्र प्रदान किया था। जुलू-संग्राममें भी आपने सहायता पहुंचाई। उसके बाद महासमरमें आपने और आपकी धर्मपत्नीने बड़ी सहायता की। अफसोसकी बात है कि उसके बाद आपका रुख बदल गया और आपने सत्याग्रह इख्तियार किया। आप जानते हैं कि सरकारके लिए अपनी हुकूमत कायम रखना जरूरी है—शासन तो आखिर करना ही पड़ता है।"

गांधीजीने कहा कि, श्रीमान्के पास इतना समय नहीं और मैं प्रत्युत्तर देना भी नहीं चाहता। सम्राट्ने कहा, ठीक है, किंतु शासन तो करना ही पड़ता है। फिर उन्होंने बंगालकी बमबाजीका जिक्र किया और कहा कि यह बहुत बुरी चीज है, इससे कोई लाभ नहीं हो सकता।

गांधीजीने कहा कि मैं उसे रोकनेकी भरपूर चेष्टा करता रहता हूं।

फिर सम्राट्ने पूछा—मैंने सुना है कि आप बच्चोंको खूब प्यार करते हैं, यह सच है ?

गांधीजीने कहा कि मैं बच्चोंके बीच ही रहता हूं।

गांधीजीका सम्राट्से मिलना राष्ट्रीयताकी विजय है। यह पहला मौका है कि इस तरह एक अर्द्धनग्न मनुष्य और साथमें महादेवभाई गांधी टोपी पहने सम्राट्से मिले। साथ ही, इससे अंगरेज-जातिकी भी एक खूबीका पता चलता है। अंगरेज बनिये हैं, स्वभावसे ही संग्रामप्रिय नहीं। प्रिंस ऑव् वेल्सकी गांधीजीने 'अवज्ञा' की, तो भी सम्राट् उनसे सौजन्य-पूर्वक मिले। राजपूतोंके इतिहासमें और ही प्रकारके उदाहरण मिलेंगे। महाराणा उदयपुर ने अलवर-नरेशको कभी "महाराज" कहके संबोधित नहीं किया। "अलवर ठाकुरसाहब", ही कहते रहे। अंगरेज सरकारने तोपों की सलामी दी---हिज हाइनेस तक कहा---मरते समय महाराज जयपुरने ढिलाई कर दी---मगर राणा अकड़े ही रहे।

'नानक' नन्हे ह्वै रहो जैसे नन्हीं दूब।
घास-पात जल जायंगे---दूब खूब की खूब ॥

तेतीस

१२ नवंबर, '३१
लंदन

हिंदू-मुस्लिम-समस्यामें कोई फेर नहीं पड़ा है। गांधीजी तो इस संबंधमें बातें करनेसे भी इंकार कर देते हैं। कोई बातें करने आता ह, तो कह देते हैं कि मेरे समय की बरबादी न कीजिए। मुसलमानोंने चाहा भी कि फिर बात छेड़ें, किंतु गांधीजीने कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। बात यह है कि मुसलमान और सिक्खोंको छोड़कर बाकी अंगरेज, ईसाई, अधगोरे, अछूत,जमींदार, व्यापारी और मजदूर इनमें किसीको भी अलग 'कुर्सी' नहीं देना चाहते। मुसलमान दिखानेको तो अछूतोंका पक्ष करते हैं, किंतु असलमें अंगरेजोंको 'कुर्सी' न मिले, यह कहनेकी किसीकी भी हिम्मत नहीं है। कोई अछूतोंकी सिफारिश करने आता है, तो महात्माजी गरम

हो जाते हैं। और कह देते हैं कि तुमको अछूतोंकी क्या खबर! अछूतोंका मुखिया तो मैं हूं।

मुसलमान ५१ के बजाय ५० भी लेनेको तैयार हैं, ऐसी हवा आती है। महात्माजी कहते हैं कि "५१ ही लो, किंतु और किसीको कुछ नहीं मिलेगा। मैं भारतवर्षका बंटवारा करने नहीं आया हूं। मुसलमानों और सिक्खोंको किसी तरह मैंने बरदाश्त कर लिया। अब और ज्यादा गुंजाइश नहीं है।" मजा यह है कि पांच हिंदू एक स्वरसे अछूतोंको सीट दिलानेके पक्षमें हैं और अलग मताधिकार भी। गोया हिंदू-जातिका बंटवारा हो रहा हो।

गत रविवारको आक्सफोर्डमें महात्माजी, लार्ड लोथियन, मैकडानल्डका बेटा और इर्विनके प्रतिनिधि इकट्ठे हुए। महात्मा-जी ने यह स्कीम दी कि सच्चा प्रांतीय स्वराज तो शीघ्र ही स्थापित कर दिया जाय। केंद्रीय स्वराजका विधान चाहे तैयार न हो; किंतु रूप-रेखा अभीसे घोषित कर दी जाय। प्रांतीय परिषदोंका नया चुनाव हो और उन चुनिंदा लोगोंमेंसे प्रांतीय परिषदें अपने प्रतिनिधि नई गोलमेज-परिषद्के लिए मनोनीत करें और वह नई गोलमेज-परिषद् केंद्रीय स्वराजके लिए घोषित रूप-रेखाके अनुसार नया विधान तैयार करे। सप्रू वगैरह इससे बड़ी घबराहटमें पड़े हैं। वह इसलिए कि सरकार नामधारी स्वराज देकर केंद्रीय स्वराजको ढीलमें डाल सकती है। उनकी यह आशंका सही भी है; क्योंकि सरकारकी नीति भी कुछ ऐसी ही है। और अब उन्हें गांधीजीका सहारा मिल गया। किंतु गांधीजी कहते हैं कि "यदि वे आगे न चले तो मुझे क्या डर है। मैं उनसे अच्छी तरह लड़ लूंगा। तुम लोगोंमें आत्मविश्वास नहीं है, इसलिए तुम लोग ऐसी बातें करते हो।"

गांधीजी इस गोलमेज-परिषद्से उकता गये हैं। यह परिषद् एक तरहसे बावन भेषकी टोली बन गई है। लोग अपना अलग-अलग स्वर निकालते रहते हैं। हिंदुस्तानकी तो किसीको भी नहीं

सूझती। आर० टी० सी० का मजमा ऐसा बन गया है, जैसे बीस बाजोंमें, अलग-अलग स्वरमें, एक ही साथ भिन्न-भिन्न राग गाये जायं। गांधीजीकी चालमें एक तरहसे दूरदर्शिता है सही; किंतु इसका फल तभी हो सकता है जबकि हम लोग अपनी ताकत बनाये रखें।

इस सप्ताहमें होरसे वार्तालाप होनेवाला था, पर वह बीमार पड़ गया। आज महात्माजी और होरके बीच वार्तालाप होगा। पंडितजी और प्रधान मंत्रीके बीच कल बातें हुई थीं। उससे यह आभास मिला कि केंद्रीय स्वराजका तो केवल वादा कर देंगे और प्रांतीय स्वराजकी अभीसे घोषणा करके आगामी अगस्त तक कानून पास करा देंगे। प्रधान मंत्रीने कहा कि आप लोग जब अपना झगड़ा तय नहीं कर सकते, तब हमसे क्या आशा कर सकते हैं! इर्विनने भी पुरुषोत्तमदाससे कहा कि तुम्हारे झगड़ेने तुम्हारा काम बरबाद कर दिया। यह सही है, किंतु यह भी है कि कुछ लोग जो सरकारसे खा गये हैं, अपना-अपना पक्ष जोरसे खैंचकर समझौता नहीं होने देते और ऐसे-ऐसे खानेवाले लोग आज नेता बन बैठे हैं।

अभी एक योजना और गढ़ी जा रही है। मुसलमान, अछूत, अंगरेज, अधगोरे, ईसाई—आपसमें एक संधिपत्र तैयार कर रहे हैं। किंतु इसमें भी अंगरेज अपनी शक्ति कायम रखना चाहते हैं, सो उनके बीच भी अभी तक कोई समझौता नहीं हुआ है। मुझे तो कोई समझौता होनेकी आशा भी नहीं है। हमारे प्रधान जमाल-मोहम्मद साहब बेचारे खूब दौड़-धूप करते हैं और अपना सौजन्य भी साबित कर दिया है। वह कहते हैं कि जिन्ना राष्ट्रवादी है, तुम्हारे पीछे मुसलमानोंसे खूब लड़ता है। यह यहांकी हालत है।

आज यहां आये करीब दो महीने हो गये और हम लोग एक तिल भी आगे नहीं बढ़े हैं। क्या होगा यह भी पता नहीं है। गोल-मेज परिषद्का यह दो महीनेका इतिहास बड़ा दर्दनाक है। हम लोग कितने निकम्मे हैं, यह लोगोंने यहां साबित कर दिया। ऐक्य

तो है ही नहीं। सब लोग अपना-अपना मान बढ़ानेकी फिक्रमें हैं। इस मर्जसे शायद ही कोई बचा हो। गांधीजी हमारे कप्तान हैं और उन्हें सहायता पहुंचानी चाहिए, इसकी किसीको भी चिंता नहीं। इसका कारण यही है कि ये सब-के-सब सरकार द्वारा मनोनीत किये गये हैं। यदि प्रजा द्वारा मनोनीत किये गये होते तो यह नौबत न आती। इर्विन-गांधी-समझौतेके समय जो दृश्य था, वह यहां देखनेमें नहीं आता। वल्लभभाई, जवाहरलाल इत्यादि किसीने वाइसरायके घरकी तरफ भी जाकर नहीं ताका, और सारा भार गांधीजीपर छोड़ दिया। यहां यह हालत है कि गांधीजी प्रधानसे मिलते हैं तो उसके बाद ही मुसलमानोंके नेता आग़ाखांसे मुलाकात होती है। फिर अछूत नेता अंबेडकर—सिक्ख नेता उज्जलसिंह आदिसे मुलाकात होती है और नरमदलके नेता डाक्टर सप्रूसे। और इन मुलाकातोंमें सब लोग अपना अलग-अलग वक्तव्य देकर आते हैं। हमारी अनेकता ऐसी साबित हुई, जैसी पहले कभी नहीं हुई। ब्रिटिश कूटनीतिकी सोलहों आने विजय हुई है। सब बातें लिखनेसे तो अत्यंत दुःख होता है, क्योंकि हमारे बड़े नेताओंने भी यहां अपने सम्मानके मोह-जालमें फंसकर एकताको कैसे नष्ट कर दिया है, उसका दुःखदायी प्रदर्शन मिलता है। भविष्यमें जब कभी समझौतेकी बात उठे तो पहली शर्त यह हो कि जो लोग मनोनीत हों, वे प्रजाद्वारा निर्वाचित हों—जिससे, कम-से-कम, कांग्रेसका बहुमत आ जावे और निर्वाचित लोग एक डोरमें बंधे हुए हों। यहां तो यह हालत है कि

नाइयोंकी बारातमें सभी ठाकुर।

आर्थिक प्रश्नोंके संबंधमें बेंथल और हम लोगोंके बीच टूटी-फूटी बातें चली आ रही हैं। अभी तक बैंक आव् इंग्लैंडके परिचालकोंसे कोई वार्तालाप नहीं हुआ, किंतु बेंथल और कैटोने सूचना दी है कि यहांके सेठ लोग हमारे आर्थिक क्षेत्रपर कोई अधिकार नहीं चाहते, बशर्ते कि हम उनसे रुपया उधार मांगनेको न आयें।

चौंतीस

१३ नवंबर, '३१
लंदन

कल होरसे गांधीजी मिले। परिस्थिति बिल्कुल स्पष्ट होगई। प्रांतीय स्वराजको छोड़ और कुछ मिलनेवाला नहीं है। होरने कहा कि बाकी बातोंको जांच-पड़ताल की जायगी, फिर निश्चय किया जायगा कि क्या करना चाहिए। गांधीजीने कहा—इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि जांच-पड़तालमें २-३ साल लग जायं। उसने कहा—हां, हो सकता है। गांधीजी बोले—और संभव है, अंतमें यह निश्चय हो कि कुछ भी न दिया जाय। उसने यह संभावना भी स्वीकार की। सो इस आर० टी० सी० का नतीजा यह निकला! गांधीजीने कहा—"बहुत खूब! हम एक-दूसरेसे मित्रता रखते हुए ही अलग हों—यही मेरी आंतरिक इच्छा है।" गांधीजी बहुत शीघ्र यहांसे प्रस्थान करनेवाले हैं—कहा जाता है, एक सप्ताहके भीतर ही। तैयारी शुरू कर दी है।

आज अल्पसंख्यक-दल-परिषद्की बैठक थी। प्रधान मंत्रीने कहा कि अगर इस प्रश्नका निर्णय मुझपर छोड़ना है, तो बाकायदा अपनी-अपनी स्वीकृति मुझे दे दो। उसने यह भी कहा कि विधान-निर्माण-परिषद्की बैठक अगले सप्ताह होगी। यह किसलिए? जब केंद्रीय स्वराजकी संभावना ही नहीं, तब इस परिषद्का काम ही क्या है? कुछ लोगोंको इससे आशा होती है कि होरने जो कुछ कहा वह अंतिम शब्द नहीं है—या कम-से-कम परिस्थिति उतनी निराशाजनक नहीं है। पर वास्तव में आशाके लिए गुंजाइश बहुत कम—शायद नहींके बराबर—रह गई है। गत मई महीनेमें विलिंगडनने सप्रू और जयकरसे कुछ ऐसी ही बातें की थीं। कहा था कि फिलहाल प्रांतीय स्वराज मिल जाय तो क्या बुरा है? जो बात इतने दिनोंसे दिलमें थी, वह अब निकलने लगी है।

अब ईर्विन भी कह रहा है कि बात मेरे बसकी नहीं––लोग यह कह रहे हैं कि जब बायकाट बंद नहीं हुआ, तब तुम्हारे और गांधीके बीचके समझौतेका मूल्य क्या समझा जाय ?

अल्पसंख्यक दलोंके बीच जिस समझौतेकी चर्चा थी उसका मसविदा निकल गया। इसमें सिक्ख शामिल नहीं हैं। हिंदुस्तानी ईसाइयोंके यहां जो दो प्रतिनिधि हैं उनमें डा० दत्तने न तो इस बातचीतमें ही कोई भाग लिया है न इसमें शरीक ही हुए हैं। इस समझौतेमें ऐसी बातें जरूर हैं, जिनपर आपत्ति की जा सकती है। पर यह कैसे मान लिया जाय कि इसमें काट-छांटकी गुंजाइश नहीं है ? भिन्न-भिन्न दलोंके जो नेता बनकर यहां आये हैं उनके लिए यह कलंककी बात रहेगी कि ऐसे महत्वपूर्ण अवसरपर भी वह अपनी संकीर्णताकी तंग गलियोंको छोड़कर राष्ट्रीयताकी––एकताकी––चौड़ी सड़कपर न आ सके। अफसोस !

अगर विचारपूर्वक देखा जाय तो अल्पसंख्यक दलोंकी यह संयुक्त मांग भी इतनी भयंकर नहीं है कि आपसमें समझौता होनेकी आशा ही त्याग दी जाय। यूरोपियन जितनी कुर्सियां मांगते हैं उतनी उन्हें नहीं मिल सकतीं। पर वह भी जानते हैं कि वह इससे कमके हकदार हैं और कुछ कम कर देनेपर भी वह संतुष्ट हो जायंगे। अछूतोंसे यह समझौता होना असंभव नहीं दीखता कि तुम्हें इतनी कुर्सियां दे दी जायंगी, पर तुम्हें संयुक्त निर्वाचन स्वीकार करना होगा। ईसाई, ऐंग्लो-इंडियनको भी कुछ-न-कुछ देना ही होगा। सवाल पंजाब और बंगालका रह जाता है। अगर घड़ीभरके लिए मान लिया जाय कि मुसलमानों-को ५१ फीसदी मिल गया तो आखिर इससे क्या हो जायगा ? प्रलय उपस्थित हो जायगा ? ५०-५० पर समझौता हो सकता है। अगर यह कहा जाय कि मुसलमान और अंगरेज मिलकर हर हालतमें हिंदू-सिक्खसे अधिक रहेंगे तो इसके खिलाफ यह दलील भी है कि मुसलमानोंके सारे वोट एक ही ओर पड़ेंगे, यह

मान लेनेकी कोई वजह नहीं है। राजनीतिज्ञता, दूरदर्शिता—इन गुणोंको अपने शासकोंमें देखनेकी हमारे नेता प्रायः इच्छा प्रकट किया करते हैं। कम-से-कम इस मौकेपर इन्हें भी तो इन गुणोंका परिचय देना चाहिए था। भारतवर्ष-जैसे देशका भविष्य गढ़ने चले हैं, पर अपना-अपना हठ, दुराग्रह, तअस्सुब, तंगदिली घड़ीभरके लिए भी छोड़नेको तैयार नहीं हैं।

ब्रिटिश कूटनीतिके लिए हमारे इन नेताओंने सारा मार्ग बहुत ही सुगम और परिष्कृत कर दिया। अगर हमारी एकता होती तो उसकी ऐसी पूरी विजय कभी न होती। जिन महत्वपूर्ण प्रश्नोंपर ब्रिटिश सरकारसे, ब्रिटिश पूंजीपतियोंसे, दरअसल बातचीत करनेके लिए यहां गांधीजीकी जरूरत थी, उनकी तो उनसे चर्चा ही नहीं की गई। अपने शत्रुओंको यह जीत बहुत ही सस्ते दामों मिली।

पैंतीस

१६ नवंबर, '३१

लंदन

आशाकी लता मुरझाकर फिर कुछ हरी हो चली है। अंगरेज व्यापारी दौड़-धूप करने लगे हैं, अधिकारियोंकी ओरसे भी चेष्टा हो रही है कि बातचीतका सिलसिला जारी रहे। कान्फ्रेंस तोड़ देना आसान काम है—पर सभी समझते हैं कि इसका नतीजा क्या होगा। जो बातचीत चल रही है, उसमें हमारे शत्रुओंकी ओर कितनी सचाई है, कहना कठिन है। कान्फ्रेंस टूटनेकी संभावनासे वे कुछ लज्जित हुए हैं—कुछ भयभीत भी। शीघ्र ही स्पष्ट हो जायगा कि बातचीत आगे बढ़ानेमें उसका वास्तविक उद्देश क्या था।

बेंथल कल आप-ही-आप मुझसे मिलने आया। कुछ चिंतित-सा था। कहा कि फसादकी जड़ होर है, वही विरोध कर रहा

है, पर हमने अपने दलकी ओरसे उसे लिखा है कि अगर कान्फ्रेंस टूट गई—उसका उद्देश सिद्ध न हुआ—तो इसका परिणाम भयंकर होगा और हम लोग भी उसके लिए तैयार नहीं हैं। बेंथल-का कहना है कि मंत्रिमंडलमें होर प्रभावशाली जरूर है, पर उसकी चलेगी नहीं। मैंने कहा कि तुम लोगोंने मुसलमानों और अछूतोंके प्रतिनिधियोंसे इकरारनामा करके समस्या और भी जटिल कर दी है। उसने कहा कि हम लोगोंने कोई इकरारनामा नहीं किया है। हमने तो एक तरहसे दरख्वास्त की है कि हमारा यह हक है—हमें शासन-विधानमें यह अधिकार मिलना चाहिए। जब मैंने कहा कि तुम लोगोंको प्रतिनिधित्वका अधिकार दूसरे ढंगसे भी मिल सकता है तब उसने कहा कि मुझे इसका रास्ता बताओ, हम लोग उसपर विचार करेंगे। मैंने कहा कि तुम पहले मुसलमानों-को इस बातके लिए राजी करो कि हिंदू-मुस्लिम-सिक्ख-प्रश्न-को वह प्रधान मंत्रीपर छोड़ दें। उसने कहा कि मुसलमान औरों-को छोड़कर निपटारा करानेको कभी तैयार न होंगे। अंतमें यह तय हुआ कि बेंथल और कार मेरे यहां महात्माजीसे मिलें।

रातको ९॥ बजे सब मिले। महात्माजीने अंग्रेजोंको कुर्सियां देनेसे साफ इंकार किया। मैंने बहुत समझाया-बुझाया, पर वह टस-स-मस न हुए। मेरी राय है कि अगर समझौता हो सकता है तो इनको कुर्सियां देकर भी कर लेना चाहिए, जिससे इनके द्वारा अपनेको सहायता मिल सके। पर महात्माजीका मत और है। वह आपसमें समझौता करके यह तय कर देना चाहते हैं कि अमुक प्रांतमें अंगरेजोंको—संयुक्त निर्वाचनसे—इतनी कुर्सियां मिला करें—कानूनन ऐसा होने देना उन्हें मंजूर नहीं। वह कहते हैं कि कांग्रेस लिखकर दे देगी और अंगरेजोंको उसके कौल-करार-पर ही रहना होगा। बेंथलने कहा कि बंगालमें जो लोग हमारे खून-के प्यासे हो रहे हैं, वे हमारे साथ ऐसी सहानुभूति कब दिखायेंगे, हमारे साथ ऐसा न्याय कब करेंगे ? पर महात्माजी अंततक यही कहते रहे कि हम अंगरेजोंके साथ न्याय करना जरूर चाहते

लंदन में गांधीजी अपनी पार्टीके साथ
(मित्र-मंडली के बीच)

सरोजनी नायडू : लेखक : गांधीजी : सर प्रभाशंकर पट्टणी
(कान्फरेन्स में जाते हुए)

हैं, पर हमारे बीच जो कुछ समझौता होगा, वह कानूनके घेरेके बाहर। महात्माजीका मौन-दिवस था, इसलिए वह अपनी राय कागजपर लिखकर ही जाहिर करते रहे। आज रातको फिर बातें होंगी। मुझे आशा नहीं होती कि अंगरेजोंको महात्माजीकी बात कभी मंजूर होगी।

कैटो भी दौड़-धूप कर रहा है। उसका लार्ड रीडिंगपर काफी प्रभाव है और उसने इनसे कहा कि यह क्या वाहियात काम हो रहा है! बात यह है कि सत्याग्रहकी संभावनाने सबको गहरी चिंतामें डाल दिया है। व्यापारियोंको अपने व्यापारकी फिक्र है और वह जानते हैं कि अगर भारतवर्षने फिर उस राहपर कदम रखा, तो उनका व्यापार चौपट हो जायगा। उनकी बातोंका यहांके अधिकारियोंपर भी प्रभाव पड़ा है। कल होरने महात्माजीको बुलाकर उन्हें समझाना चाहा कि उसकी स्कीमको उन्होंने पूरा नहीं समझा है—अर्थात् वह प्रांतीय स्वराजतक ही परिमित नहीं है। आज विधानपरिषद्में भी कुछ आशाजनक भाषण हुए। प्रधान मंत्रीने तो सप्रूको लिखा है कि मैं कभी विश्वासघात न करूंगा, और अगर मेरी न चली, तो मैं इस्तीफा दे दूंगा।

इधर जनरल स्मट्स भी इस मामलेमें दिलचस्पी लेने लगा है। उसका महत्माजीका पुराना परिचय है। परिचय ही नहीं, दोनोंका दक्षिण अफ्रीकामें काफी संबंध रहा है। स्मट्सकी अंतर्राष्ट्रीय संसारमें अच्छी ख्याति है। आयरलैंडके साथ जो संधि हुई थी, उसमें इसने खासा भाग लिया था। जब बातों-बात महात्माजीने उससे कहा कि मैं खाली हाथ लौटनेवाला हूं, तब वह बोला कि "इसपर कौन यकीन कर सकता है कि तुम्हें ये लोग खाली हाथ लौटने देंगे? तुम भारतके हृदय-सम्राट् हो—इन्हें यह तो मालूम होना चाहिए कि तुम्हारे खाली हाथ लौटनेका वहां क्या नतीजा होगा।" फिर उसने हिंदू-मुस्लिम-प्रश्नकी

चर्चा की। महात्माजीने कहा कि फिलहाल और कुछ नहीं तो लखनऊका समझौता तो है। उन्होंने इस प्रश्नको हल करनेका रास्ता भी बताया। स्मट्स उनका प्रस्ताव लकर प्रधान मंत्रीके पास गया और दूसरे समय महात्माजीसे रिज होटेलमें, जहां वह मुसलमानोंसे बातें करने गये थे, मिला। उसने कहा कि मैकडोनल्ड पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ा है और वह कहता था कि गांधी एक अद्भुत व्यक्ति है—उसका अभिप्राय समझना कठिन-से-कठिन काम है। स्मट्सने कहा कि ये लोग आपको नहीं जानते, इसीसे ऐसी बातें करते ह।

मेरी अपनी सहानुभूति प्रधान मंत्रीके साथ है—मैंने महात्मा जीसे कहा भी कि आपकी भाषा सरल-से-सरल और साथ ही गूढ़-से-गूढ़ होती है। शायद ही कोई दावा कर सकता हो कि उसने आपका यथार्थ भाव समझ लिया। खैर!

स्मट्सने सहायता पहुंचानेका वचन दिया और उससे जो कुछ हो सकता है, वह कर रहा है। हमारे सम्राट् यहांसे प्रायः सौ मील-पर सेंड्रिघममें विराजमान हैं। स्मट्स वहां जा पहुंचा है और वहां-से मि० एंड्रूजके नाम परवाना आया है कि आप आकर मिलें।

छत्तीस

१७ नवंबर, '३१
लंदन

कल रात बेंथल और कार फिर महात्माजीसे मिले। घंटेभर तक महात्माजी उन्हें फटकारते रहे। उन लोगोंने अपनी सफाई-में बार-बार यह कहा कि हमारा मुसलमानोंसे कोई समझौता—कोई इकरारनामा—नहीं है, हमने तो एक अर्जी-सी पेश की है कि हमें इतना मिलना चाहिए। पर महात्माजीको इससे कुछ भी संतोष नहीं हुआ। उन्होंने जो कुछ कहा, उसका

सारांश यह है :

"तुम लोगोंपर मेरा जो विश्वास था, वह उठ गया। मुसलमानोंसे, अछूतोंसे तुम लोगोंने जो समझौता कर लिया उससे मेरे दिलको ऐसा घाव लगा है, जो जल्दी भरनेका नहीं। तुम कहते हो कि तुम्हारी यह हरकत मुझे बुरी लगी है। पर इन शब्दोंस मेरा भाव पूरी तरह व्यक्त नहीं हो सकता। बुरा लगना तो एक साधारण-सी बात है—तुम्हारी करतूत तो वह दगा है, जिसमें तुमने मुझे अपने खंजरका शिकार बनाना चाहा है। तुम्हारे पास तो सभी साधन हैं, अगर तुम्हें अपने हक न मिलते तो हमसे खुल्लमखुल्ला लड़ लेते। मैं बराबर यही कहता आया कि अंगरेजोंका विश्वास करो, अब मैं किस मुंह तुम्हारी भलमनसाहतका इजहार कर सकता हूं ? तुमने तो यह साबित कर दिया कि तुम्हारे आदर्श अभी बदले नहीं हैं—तुम ईस्ट इंडिया कंपनीकी ही राहपर चलनेवाले हो। कंपनीने अपना प्रभुत्व जमानेके लिए कभी इसका साथ दिया, कभी उसका—कभी इसको उससे लड़ाया, कभी उसको इससे—और अंतमें सबको तंग-तबाह करके अपना साम्राज्य कायम कर लिया। तुम भी ऐसी ही भेद-नीतिसे काम लेना चाहते हो। आज भारतवर्षमें जो जातियां जीवन-संग्राममें पिछड़ी हुई हैं, जिनके पास न दौलत है न दिमाग है, उनको अपने चंगुलमें फंसाकर तुम सारे देशपर अपनी सत्ता कायम रखना चाहते हो। गनीमत है कि तुम अंगरेज-समाजके भी प्रतिनिधि नहीं हो। मैं दावा करता हूं कि उनका सच्चा प्रतिनिधि मैं हूं। बंबईके नौजवान अंगरेज तुम्हारी तरह नहीं हैं। यहां भी मुझे एक अंगरेज ऐसा नहीं मिला, जिसने तुम्हारी तारीफ की हो। अगर तुम इस समझौतेसे आप-ही-आप नहीं निकल जाते, तो या तो मैं इसे चूर-चूर कर दूंगा या उसके लिए लड़ता हुआ मर मिटूंगा।"

अंगरेजोंने कहा कि हम तो निकल गये हैं, हमारा अब

उससे कोई लेना-देना नहीं है—क्योंकि हमने सबकुछ प्रधान मंत्रीपर छोड़ दिया है। पर गांधीजीको इन बातोंसे संतोष न हो सका।

मुसलमानोंने यह जाहिर कर रखा था कि हम लोग विधान-परिषद्की कार्यवाहीमें भाग न लेंगे, पर होरके समझानेपर राजी हो गये और परिषद्का काम फिर जारी है। पंडितजी सेनाके संबंधमें प्रायः एक घंटा बोले। पर संतोष न हुआ। कहते थे कि दो-तीन घंटे और बोलूंगा।

जमाल मोहम्मद साहबकी मुसलमानोंने बड़ी फजीहत की है। बेचारे डर गये हैं। उस दिन गांधीजीकी उपस्थितिमें मुसलमानोंने उन्हें अपमानित किया। कहा कि तुम जासूस हो, इधरकी बातें उधर पहुंचाते हो। इकबाल बोला कि तुम्हारे पास पैसे हो गये, तो तुम अपने-आपको बहुत बड़ा आदमी समझने लगे। जमालसाहबकी जबान कब बंद रहनेवाली थी? जवाब दिया कि तुम्हें काफिया मिलाना आ गया तो तुम अपनेको कौमका सिरताज समझने लगे? जमालसाहब किसीसे दबनेवाले नहीं हैं। कोई हो तुर्की-बतुर्की जवाब दे देंगे। उनमें यह दोष है कि मर्यादाका उल्लंघन कर जाते हैं और वाक्चातुरी न होनेके कारण लोगोंको अकारण ही चिढ़ा देते हैं। कुछ लोग—उनके मित्रोंमें ही—उन्हें मगजचट कहने लगे हैं। मुसलमानोंकी आंखोंमें तो वह कांटेके समान चुभते हैं।

सैंतीस

२० नवंबर, '३१

लंदन

इस सप्ताह महात्माजी लायड जार्जसे उसके घरपर मिले। लायड जार्जने कहा कि आपको सत्याग्रह करना ही पड़ेगा—बिना लड़ाईके आपको स्वराज मिलनेवाला नहीं है। उसने मैकडानल्डको

कमजोर बताया। कहा कि टोरी दलके १५० मेंबर भी मैकडानल्ड का साथ देनेवाले हों, तो वह अपनी स्कीम पास करा सकता है।

मैकडानल्डकी कमजोरीकी शिकायत और लोगोंसे भी सुननेमें आई है। इस सप्ताह लेबर-पार्टीके प्रधान मेंबर स्मिथ और लारेंस मेरे यहां खाना खाने आये थे। अगले सप्ताह वेजउड बेन और दूसरे लोग भी आनेवाले हैं। स्मिथ पिछली लेबर-मिनिस्टरीमें रह चुका है, और लारेंस अर्थ-विभागका पार्लमेंटरी मंत्री था। स्मिथसे बड़ी देरतक बातें होती रहीं, वह बराबर नोट लेता गया। मैंने उसे सारी परिस्थिति समझाई और बताया कि अगर झगड़ा चला तो खजानेमें टोटा बना ही रहेगा और इंग्लैंडको यहांसे पैसे भेजकर भारतवर्षका शासन करना पड़ेगा। उसको यह बात मार्केकी जंची और उसने इस संबंधमें कई प्रश्न किये। अंतमें कहा कि "पारसाल गांधीजीने यहां न आकर गलती की। इस साल टोरी दलवाले गलती कर रहे हैं। मैकडानल्ड कमजोर आदमी है, वह इस प्रश्नके लिए अपना सिर देनेको तैयार नहीं है।" फिर उसनेपूछा—पर अगर वह इतनी हिम्मत करे तो क्या गांधीजी अपना सिर देनेको तैयार होंगे ? मैंने कहा कि इस प्रश्नका उत्तर तो यह देखकर ही दिया जा सकता है कि हमें मिलता क्या है। पर अगर इतना भी हो जाय कि गांधीजी विरोध न करें तो बहुत है—और यह संभव है कि सोलह आनेके बजाय बारह आने मिलनेसे गांधीजी विरोध न करेंगे। स्मिथने कहा कि "इस मंत्रिमंडलसे जो कुछ मिल जाय, ले लो—शीघ्र ही इसका पतन होगा और हम लोगोंका फिर बोलबाला होगा। तब तुम्हें बहुत-कुछ मिलनेकी उम्मीद रहेगी।"

अड़तीस

२७ नवंबर, '३१

लंदन

आज विधान-परिषद्की अंतिम बैठक है। विधान बननेमें तो न जाने अभी कितनी देर है, पर इसके नामपर जो नाटक चल

रहा था, वह अब पूरा हो चला। साथ ही बर्मा-गोलमेज-कान्फ्रेंस नामका दूसरा तमाशा शुरू हो रहा है।

इस सप्ताह महात्माजी प्रधान मंत्रीसे फिर मिले। उन्होंने कहा कि प्रांतीय स्वराज मैं लेनेको तैयार हूं—बशर्ते कि वह मेरे मनकी चीज हो। पर मेरे प्रांतीय स्वराजमें न तो बंगालके राजनैतिक कैदी जेलखानोंमें पड़े सड़ते रहेंगे, न वहां फौजकी ही कोई जरूरत रह जायगी। महात्माजी तो मैकडानल्डको मूर्ख और होरको समझदार बताते हैं। विधान-परिषद्के अध्यक्ष लार्ड सैंकीका उनपर बहुत अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा है।

स्मिथ और लारेंससे बातचीत हुई। कहते थे कि "मामला बिगड़ गया। हिंदू-मुस्लिम-समझौता न होनेका अनुचित लाभ उठाया जा रहा है। साथ ही स्वीकार करना होगा कि इसकी गुंजाइश भी है।" मैंने बेनसे कहा कि अगर सरकार पूरी तस्वीर हमारे सामने रख दे कि अगर तुम एक हो जाओ तो तुम्हें इतना मिल सकता है, तो समझौता आसानीसे हो जाय। बेन बोला कि "इस कान्फ्रेंसको किसी तरह जिंदा रखना चाहिए। चाहे यह यहां काम करे चाहे वहां, मगर इसका काम जारी रहना चाहिए।"

रात लारेंस और बेन मेरे साथ भोजन करने आये थे। देर तक बातें होती रहीं। बेन दिलका साफ आदमी है। उसने कहा कि "इंपीरियल प्रिफरेंस दिलानेके लिए मैं जिम्मेदार नहीं हूं। मैंने इस मामलेमें कुछ नहीं किया।" एक्सचेंजके बारेमें उससे मालूम हुआ कि शुष्टर जब यहां आया था तब उसने सिफारिश की थी कि १-६ छोड़ दिया जाय। पर बेन ऐसे आर्थिक प्रश्नोंके संबंधमें कम—बहुत कम—जानकारी रखता है, इसलिए उसने इस मामलेमें शुष्टरसे खुद बातें न कर सर हेनरी स्ट्राकोश और किशके सुपुर्द कर दिया। मैं उसको आर्थिक परिस्थिति समझाता रहा। उसने कहा कि कुछ होता-जाता नजर नहीं आता। मैंने कहा कि अगर मैकडानल्ड महात्माजीको बुलावे और दोनोंकी

दिल खोलकर बातें हों, तो शायद कोई रास्ता निकल आवे। बेनने कहा कि मैकडानल्ड ४-५ महीनेसे ज्यादा ठहर नहीं सकता। टोरी दलवाले उसको और बाल्डविन इन दोनोंको ही धता बता देंगे। उसने पूछा कि जिन लोगोंने हिंदुस्तानमें रुपया लगा रखा है, उनको कैसे संतुष्ट किया जाय? मैंने कहा कि हम "न्यायसे विमुख होना नहीं चाहते। पर अगर हमें संतोष नहीं होता तो क्रांति किसीके रोके रुक नहीं सकती। उस हालतमें, जिन लोगोंने रुपया लगा रखा है, उनके लिए और भी खतरा है। हमारे ऊपर तुम्हारे कर्जका बोझ जरूर है, पर आखिर उसे चुकानेका रास्ता क्या है? मान लो कि हम एक्सचेंज घटाकर अपना एक्सपोर्ट बढ़ाते हैं, उस हालतमें भी तुम्हारे व्यापारको धक्का लगता है। पर असलियत तो यह है कि संसारके इतिहासमें इस तरहका कर्ज कभी किसी देशने चुकाया नहीं है। बात असंभव-सी है। तुम्हारी नीति ऐसी होनी चाहिए कि हमसे असल तो नहीं, पर सूद बराबर अदा होता जाय।" बेनने कहा कि यहांवालोंको यह मालूम हो कि असलियत यह है तो वह और भी सख्तीसे पेश आयेंगे। मैंने कहा, "पर हमने तो स्वतंत्र होनेका संकल्प कर लिया है—हम कब चुपचाप बैठनेवाले हैं!" बेन बोला—तुम्हारा कहना ठीक है, पर व्यापारी बड़े जड़बुद्धि होते हैं। मैंने कहा कि अगर सत्याग्रह-संग्राम फिर छिड़ा तो यह नौबत आ जायगी कि शासनके लिए इंग्लैंडको यहांसे पैसे भेजने होंगे। बेन बोला—"ठीक है, पर अगर एक डिस्ट्रिक्ट अफसरके मनोविज्ञानको देखो, तो उससे यह आशा करना व्यर्थ है कि वह इस तर्कका कायल होगा। वह कभी नहीं सोच सकता कि मेरे कारनामोंका यह असर होगा कि सरकारके खजानेमें टोटा रहेगा और यह बात खुद मेरे हकमें बुरी होगी। दुनिया अंधी है, लोग बातोंपर पूरा विचार नहीं करते—इसीसे तो इतनी खराबी है।"

तो हालत यह है कि कान्फ्रेंससे कुछ भी नतीजा नहीं निकला। पर यह बिल्कुल टूट गई, यह भी नहीं कहा जा सकता। बंगालमें

और अन्यत्र भी दमन खूब जोरशोरसे होनेवाला है। साथ ही समझौतेकी बात भी जारी रहेगी। कैलासबाबू कहा करते थे कि अंगरेजका एक हाथ पांवपर और एक हाथ गर्दनपर रहता है। अगर उसने देखा कि आपमें कुछ दम नहीं तो झट गला दबा देता है, पर अगर उसे मालूम हुआ कि आपके लड़ने-झगड़नेमें उसे लेने-के-देने पड़ेंगे, तो उसे पांव छूते देर नहीं लगती। उस अवस्थामें वह यही कहता है कि मैं तो पहलेसे ही आपके पांव चूमनेको लालायित था। यही दशा कुछ समय तक रहेगी। अगर उपद्रव बढ़ा तो समझौता बहुत शीघ्र हो जायगा, नहीं तो देने-दिलानेकी बातको खटाईमें डाल देंगे।

इस सप्ताह कुछ भाषण मार्केके हुए——नरम दलवाले भी जोश-खरोश, सरगर्मीसे बोले। महात्माजीने कहा कि गोले-बारूद-से हम डरनेवाले नहीं हैं; हमारे बच्चे भी उन्हें पटाखे समझने लगे हैं। सप्रू, जयकर, शास्त्री, मुदलियार——सबने एक स्वरसे प्रांतीय स्वराजसे आगे न बढ़नेका विरोध किया। मुसलमानोंकी ओरसे भी कहा गया कि यह पर्याप्त न होगा। मुदलियार मद्रास प्रांतके अब्राह्मण दलका प्रतिनिधि है। बहुत समझदार आदमी जान पड़ता है। लार्ड सैंकी तो कल आपेसे बाहर हो गया। बेनको बच्चे-की तरह डांटकर कहा कि जबान मत खोलो। जब बेन न माना, तब कहने लगा कि यह हालत रही तो मैं कुर्सी छोड़ दूंगा। दर-असल बात यह है कि इधर परिस्थितिमें जो कुछ अंतर पड़ा है, उसका श्रेय बेन और लीज स्मिथको ही है। सरकारकी चालको ये बखूबी समझते हैं और अगर ये न होते तो होर और सैंकीने कान्फ्रेंसको शायद चुपचाप दफना दिया होता। सैंकीका बेनसे चिढ़ना स्वाभाविक है।

भाईजीका एक तार महात्माजीके नाम आया है कि आप मुसलमानोंके साथ जैसा मुनासिब समझें, समझौता कर लें। गांधीजी मुझसे कहते थे कि इसका समय तो जाता रहा। मैंने

कहा कि इस समय भी आपको अगर हम १५ हिंदू लिखकर दे दें, तो आप क्यों न समझौता कर लें? महात्माजी बोले कि "जबतक मालवीयजी और डाक्टर मुंजे लिखकर नहीं दे देते, तबतक मैं नहीं कर सकता। यहां उनके दस्तखतके बिना मैं कुछ नहीं कर सकता।"

उन्तालीस

४ दिसंबर, '३१
लंदन

कान्फ्रेंसके नाटकका आखिरी पर्दा गिर चुका। लोग एक-एक कर लंदन छोड़ रहे हैं। महात्माजी कल प्रस्थान करते हैं। पंडितजीका प्रोग्राम अनिश्चित है। अमेरिका जानेका कुछ विचार था, मगर उन्होंने तय किया है कि एक सप्ताह यहां और बिताकर इटली होते हुए हिंदुस्तान जायंगे।

पूरी कान्फ्रेंस शनिवार, सोमवार, मंगलवार तीन दिन बैठी। पहले दिनकी कान्फ्रेंसमें एक भी उल्लेखनीय बात नहीं हुई। दोस्त-दुश्मन सभी एक ही भाषण सुननेको उत्सुक थे और वह भाषण सोमवारको—मौन टूटनेपर—होनेवाला था। दोनों दिन अधिवेशन साढ़े दस बजे दिनको आरंभ हुआ, पर सोमवारकी कार्यवाही २।। बजे रातको पूरी हुई। शास्त्री-जैसे सुवक्ता भी भ्रममें पड़ गये और थोड़ी देरके लिए यह भूल गये कि दूसरा दिन शुरू हो चुका। उनके मुंहसे भी 'आज' की जगह 'कल' निकल ही गया। सोमवारको पहले तो १०।। से ७।। बजे तक, फिर ९।। से प्रायः २। बजे तक कान्फ्रेंस बैठी। मंत्रिमंडलको प्रधान मंत्री द्वारा होनेवाले वक्तव्यपर विचार करना था, इसलिए मैकडानल्ड और होरको ५ बजे ही उठकर जाना पड़ा। फिर रातकी बैठकमें आये; बल्कि प्रधान मंत्रीकी प्रार्थनासे कान्फ्रेंस कुछ देरके लिए स्थगित की गई। बात यह थी कि गांधीजीका भाषण होनेवाला

था और प्रधान मंत्रीके पहुंचनेमें कुछ मिनिटोंकी देर थी, पर वह उसे पूरा-का-पूरा सुनना चाहता था।

गांधीजीका भाषण लाजवाब हुआ। ऐसे मौकोंपर उनकी एक-एक बात मर्मस्पर्शी हुआ करती है। सन्नाटा छा रहा था और सारी सभा चित्रित-सी जान पड़ती थी। प्रायः ७० मिनिट तक बोलते रहे। उनके बाद पंडितजी उठे। मुझे नींद सताने लगी थी और सिरमें चक्कर आ रहे थे। इसलिए बीच हीमें उठकर चला आया। दूसरे दिन पंडितजी कहते थे कि गांधीजीके वैसे भाषणके बाद कुछ कहना बाकी नहीं रह गया था—कुछ बोलनेकी इच्छा भी नहीं थी—पर नाम दे चुका था, इसलिए कुछ कहना ही पड़ा। यह भी सुना कि अंतिम भाषण शास्त्रीका था और वह अत्यंत निंदनीय था। लोगोंको बहुत बुरा लगा—मुझे जो कुछ कहना था, आज रातका अधिवेशन आरंभ होनेके कुछ ही समय बाद, कह चुका था। मैं समझता हूं कि मैंने ही यह कहनेका साहस या दुस्साहस किया कि कान्फ्रेंसको किसी प्रकारकी सफलता प्राप्त नहीं हुई—इसमें आगे बढ़ना तो दर-किनार हम और पीछे हट गये। कान्फ्रेंसके पुजारियोंको यह बेसुरा लगा। कुछ तो बेतरह चिढ़े। पर दूसरोंसे—खासकर गांधीजीसे—मुझे बधाइयां मिलीं। दुश्मनके दलमेंसे भी एकाध अंगरेज बधाई दे गये। पर लेबर-पार्टीवाले परिचित होते हुए भी खामोश रहे। मेरा मुख्य विषय यह था कि जबतक हमारा बोझ हलका नहीं किया जाता—और इसके लिए काफी गुंजाइश है, क्योंकि इंग्लैंड हमारे साथ बराबर अन्याय करता आया है—तबतक संरक्षणोंका बंधन ढीला या बर्दाश्त करने लायक हो ही नहीं सकता।

दूसरे दिनकी बैठक ११॥ बजे शुरू हुई। अच्छी भीड़ थी, पत्र-प्रतिनिधियोंको भी बैठनेकी इजाजत मिल गई थी। गांधीजीको प्रधान मंत्रीको धन्यवाद देनेका काम सौंपा गया। यह उन्हें

बड़ा ही अच्छा मौका मिला, और उन्होंने उसके वक्तव्यके संबंधमें अपना भाव बड़ी खूबीसे प्रकट कर दिया। जिस समय गांधीजी अपना रुख जाहिर कर रहे थे उस समय कुछ मेंबरोंकी हालत देखते ही बनती थी। सभा-भंग होनेपर पंडितजीके दफ्तर—११ किंग स्ट्रीट—में बहुत-से लोग इकट्ठे हुए। गांधीजी भी थे। प्रधान मंत्रीके भाषणकी समीक्षा-परीक्षा होने लगी। कुछ मेंबरों-की राय वही थी, जो बराबरसे है—अर्थात् बहुत-कुछ मिल गया। शास्त्रीने उस रातको भाषण तो निकम्मा दिया, पर उसमें ईमान-दारी है, इसलिए असंतुष्ट-सा ही था। गांधीजीके विचारमें जरा भी परिवर्तन नहीं हुआ। पंडितजी डांवाडोल थे। मुझे यह स्पष्ट दीख रहा है कि वक्तव्यसे कुछ बनने-बिगड़नेवाला नहीं है। सब-कुछ इस बातपर निर्भर होगा कि कांग्रेसकी लड़नेकी शक्ति कितनी है।

होरसे जब गांधीजी पीछे मिले तब उसने उनसे कहा कि "मैं तुम्हारी मित्रता चाहता हूं। बंगाल आर्डिनेंसके लिए मैं जिम्मेदार नहीं हूं—मैं उसे पसंद भी नहीं करता; पर मुझे लाचार होकर मंजूरी देनी पड़ी। तुम वहां जाकर परिस्थिति संभालनेकी कोशिश करो। नये गवर्नरके संबंधमें जो बातें कही जा रही हैं, वे निरा-धार हैं। वह बहुत अच्छा आदमी है।" सबसे बड़ी बात होरने यह कही कि संरक्षणोंके विषयमें यहां जो कुछ तय हुआ है वह आखिरी फैसला नहीं है—सारा प्रश्न विचारके लिए खुला हुआ है। यह संतोषजनक है। होरने महात्माजीसे यह भी कहा कि हिंदू-मुस्लिम-प्रश्नको किसी तरह आपसमें हल कर लो—बहुत कुछ उसीपर निर्भर है।

लार्ड लोथियनने महात्माजीसे कहा कि लड़नेसे तुम्हारा भला जरूर है, पर ऐसी लड़ाई न करना कि हमारा सत्यानाश हो जाय। गांधीजीने कहा, "मैं इसका ध्यान रखूंगा।" उसने कहा कि "माड-रेटोंके लिए हमारे दिलमें कोई इज्जत नहीं है। हमें तो तीनसे

समझौता करना है—तुमसे, मुसलमानोंसे और अ-ब्राह्मणदलके नेता पात्रोसे ।" गांधीजीने कहा कि "दोकी बात तो ठीक है— मगर पात्रोसे समझौता करनेकी बात निस्सार है, इसे छोड़ो ।"

रोड्स कहता था कि बिड़ला ! जब तुम्हें कभी नौकरी करनेकी जरूरत हो तो सर हेनरी स्ट्राकोशके पास जाना, वह बड़ी अच्छी सर्टिफिकेट देगा । मैंने पूछा कि वह मेरे विषयमें क्या कहता था ? रोड्स बोला, "मुझसे मत पूछो । तुम अपनी प्रशंसा सुनकर असमंजसमें पड़ जाओगे !"

परिचय

रामेश्वर—श्री रामेश्वरदास बिड़ला (लेखकके बड़े भाई)

ब्रजमोहन—श्री ब्रजमोहन बिड़ला (लेखकके छोटे भाई)

महादेव—स्व० श्री महादेव देसाई

देवदास—श्री देवदास गांधी (महात्मा गांधीके कनिष्ठ पुत्र)

गोविंदजी—श्री गोविंद मालवीय (पं० मदनमोहन मालवीयके कनिष्ठ पुत्र)

पारसनाथजी—श्री पारसनाथ सिंह (लेखकके सेक्रेटरी)

मिस लेस्टर—कुमारी म्युरिल लेस्टर (लेखिका, समाज-सेविका)

एमर्सन—(सर) एच० डब्ल्यू० एमर्सन (उस समय होम सेक्रटरी थे, बादमें पंजाबके गवर्नर हुए)

क्लार्क—सर रेजीनाल्ड क्लार्क (कलकत्तेके भूतपूर्व पुलिस कमिश्नर, व्यवसायी)

शुष्टर—सर जार्ज शुष्टर (भारत-सरकारके तत्कालीन अर्थसदस्य)

अटल—पंडित अमरनाथ अटल (जयपुर दरबारके अर्थमंत्री और प्रतिनिधि)

लोथियन—स्व० लार्ड लोथियन (अमेरिकाके तत्कालीन ब्रिटिश राजदूत भारतीय राजनीतिके अच्छे ज्ञाता)

बेन—श्री वेजवुड बेन (मजदूर-मंत्रिमंडलमें भारत-मंत्री, पार्लमेंटके पुराने सदस्य, सुलेखक तथा सुवक्ता)

स्ट्राकोश—स्व० सर हेनरी स्ट्राकोश (अर्थ-शास्त्री, भारत-मंत्रीके सलाह-कार, व्यवसायी)

बेंथल—सर एडवर्ड बेंथल (कलकत्तेकी बर्ड कंपनीके 'बड़ा साहब', ब्रिटिश व्यापारियोंके प्रतिनिधि)

इंचकेप—स्व० लार्ड इंचकेप (किसी जमानेमें कलकत्तेके मि० जेम्स मैके, पी० एण्ड ओ० नामक जगत्प्रसिद्ध जहाजी कंपनीके सर्वेसर्वा)

कार—सर ह्यूबर्ट कार (बेंथलके साथ भारतके ब्रिटिश व्यापारियोंके प्रतिनिधि)

कैटो—लार्ड कैटो (कलकत्ते की एण्ड्रू यूल कंपनीसे संबंध रखनेवाले प्रसिद्ध अंगरेज व्यवसायी)

के० टी० शाह तथा प्रो० जोशी—बंबईके अर्थशास्त्री

रंगास्वामी अय्यंगार—(अब स्वर्गीय) (मद्रासके 'हिंदू' नामक पत्रके संपादक)

ब्लैकेट—स्व० सर बेसिल ब्लैकेट (शुष्टरसे पहले भारत-सरकारके अर्थ-सदस्य)

हर्बर्ट सैमुयल—सर हर्बर्ट सैमुयल, जिन्हें बादमें लार्डकी उपाधि मिली। (प्रसिद्ध यहूदी विद्वान् और राजनीतिज्ञ)

शफी—स्व० सर मुहम्मद शफी (पंजाबके मुस्लिम नेता जो भारत-सरकारके सदस्य रह चुके थे।)

कार्बेट—सर ज्योफ्रे कार्बेट (सिविलियन जो आर० टी० सी० के संयुक्त मंत्री थे)

नरेंद्रनाथ—राजा नरेंद्रनाथ (भूतपूर्व सरकारी कर्मचारी, पंजाब हिंदू महासभाके नेता)

किश—(इंडिया आफिसके अर्थमंत्री)

डा० दत्त—स्व० डा० एस० के० दत्त (पंजाबके प्रसिद्ध ईसाई अध्यापक और नेता)

इकबाल—स्वर्गीय सर मुहम्मद इकबाल (महाकवि)

स्मिथ—प्रो० लीज स्मिथ (पार्लमेंटके लेबर-मेंबर, अर्थशास्त्री)

लारेंस—मि० पेथिक लारेंस (पार्लमेंटके लेबर-मेंबर, अर्थशास्त्री)

कैलासबाबू—स्व० सर कैलासचंद्र बोस (किसी जमानेमें कलकत्तेके सुप्रसिद्ध डाक्टर)

मुदलियार—सर रामस्वामी मुदलियार (इस समय भारत-सरकारके सदस्य, पहले मद्रासकी 'जस्टिस-पार्टी' के एक नेता)

भाईजी—श्री जुगलकिशोर बिड़ला (लेखकके सबसे बड़े भाई)

पात्रो—सर परशुराम पात्रो (मद्रासमें कांग्रेस-विरोधी दलके एक नेता)

रोड्स—सर कैंपबेल रोड्स (किसी जमानेमें कलकत्तेके एक 'बड़ा साहब', डायरी-लेखकके साथ इंडियन फिस्कल कमीशनके सदस्य)

●

'मंडल' का गांधीजी-संबंधी संस्मरण-साहित्य

१. **राष्ट्रपिता (जवाहरलाल नेहरू)** २.००

नेहरूजी द्वारा लिखी जीवनी और सिद्धांत व्याख्या।

२. **गांधीजी को श्रद्धांजलि (विनोबा)** ०.३७

गांधीजी के निधन के बाद तेरह दिन के प्रवचन। उत्तम श्रद्धांजलि।

३. **इंगलैण्ड में गांधीजी (महादेव देसाई)** २.००

गांधीजी की लंदन-यात्रा का रोचक, शिक्षाप्रद एवं प्रामाणिक वर्णन।

४. **गांधी की कहानी (लुई फिशर)** **सजिल्द** ४.००

यह गांधीजी की सम्पूर्ण जीवनी है। इसे 'आत्म-कथा' की पूरक कह सकते हैं।

५. **गांधी-अभिनन्दन-ग्रंथ (सम्पा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन) सजिल्द** ४.००

गांधीजी के व्यक्तित्व तथा सिद्धान्तों पर विभिन्न विद्वानों एवं चिन्तकों के विचार।

६. **गांधी-श्रद्धांजलि-ग्रंथ (सम्पा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन्)** ३.००

देश-विदेश के विद्वानों और लोक-नेताओं द्वारा राष्ट्रपिता को उनके बलिदान पर अर्पित की गईं श्रद्धांजलियां।

७. **गांधीजी की छत्रछाया में (बिड़ला)** १.५० **सजिल्द** २.५०

बिड़लाजी के गांधीजी-सम्बन्धी संस्मरण और अनेक विषयों पर गांधीजी के लिखे पत्र जो स्वतन्त्रता संग्राम और समाजसेवा के अनेक पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं।

८. **जीवन-प्रभात (प्रभुदास गांधी)** **सजिल्द** ५.००

गांधी-परिवार तथा दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी के प्रयोगों की मौलिक रोचक तथा शिक्षाप्रद कहानी।

९. डायरी के पन्ने (घनश्यामदास बिड़ला) १.००

दूसरी गोलमेज परिषद् (लन्दन) के अवसर पर महात्माजी के साथ के रोचक व तथ्यपूर्ण संस्मरण।

१०. बा, बापू और भाई (देवदास गांधी) ०.५०

पूज्य कस्तूरबा, गांधीजी व हरिलालभाई के हृदयस्पर्शी संस्मरण।

११. बापू (घनश्यामदास बिड़ला) २.००

बापू के सम्पर्क के अनेक मधुर संस्मरण।

१२. बापू की कारावास कहानी (सुशीला नैयर) **सजिल्द** १०.००

गांधीजी तथा उनके संगी-साथियों के आगाखां महल में इक्कीस मास के बन्दी-जीवन का हृदयस्पर्शी वृत्तांत—शिक्षाप्रद, उपन्यास-सा रोचक।

१३. बापू के आश्रम में (हरिभाऊ उपाध्याय) १.००

गांधीजी के संसर्ग की छोटी-छोटी, पर महान् घटनाओं का वर्णन—ऐसी घटनाएं जो जीवन पर गहरा असर डालती हैं।

१४. श्रद्धाकण (वियोगी हरि) ०.५०

काव्यभाषा में राष्ट्रपिता को भावपूर्ण श्रद्धांजलि।

सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली